www.sukhiparivar.com

₹25

# समृद्ध सुखी परिवार

अगस्त 2013

## जीवन का आधार है प्रेम

## विश्वास की रक्षा का पर्व है रक्षाबंधन

## नये संकल्प के साथ मनाएं स्वतंत्रता दिवस

# VASU CREATION

B-4/1626, RAI BAHADUR ROAD, LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

**Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS**

—: SPECIALISTS IN :—

**LONG KURTA ❖ 3PC SET ❖ MATERNITY WEAR ❖ JIM WEAR ❖ CAPRI SET & SLEX SUIT**

# समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 4 अंक : 7

अगस्त 2013, मूल्य : 25 रु.

विश्वास की रक्षा का पर्व

परोपकार का यथार्थ

अहं विसर्जन की अमर गाथा

| | | |
|---|---|---|
| 6 | सत्य की गहराई तक पहुंचें | स्वामी चिन्मयानंद |
| 6 | जिंदगी के 300 महीने | एंथनी क्लिफ्फोर्ड ग्रेलिंग |
| 7 | कितना दें और क्यों? | बिल क्लिंटन |
| 8 | विवाह: कितना सुख है बंधन में | देवलीना चड्ढा |
| 9 | चलो रे भैया, चलिहें नरबदा के तीर | प्रो. अश्विनी केशरवानी |
| 10 | भाग्यवाद के सहारे जीते लोग | डॉ. विजय प्रकाश त्रिपाठी |
| 11 | सच्ची मित्रता उत्तम स्वास्थ्य के समान है | सत्यनारायण भटनागर |
| 12 | श्रीकृष्ण पूरे ही परमात्मा हैं | पीठाधीश्वर बैजनाथजी |
| 13 | सद्विचार में है समस्या का समाधान | ताराचंद आहूजा |
| 14 | भौतिकता और आध्यात्मिकता का समन्वय | लीला कृपलानी |
| 15 | रक्षाबंधन: विश्वास की रक्षा का पर्व | बरुण कुमार सिंह |
| 16 | भारत का आदर्श परिवार | देवर्षि कलानाथ शास्त्री |
| 17 | अपने नजरिए को बदलो | राजिन्दर सिंह महाराज |
| 17 | बहादुरी का काम है प्रेम का प्रदर्शन करना | महात्मा गांधी |
| 18 | सफलता के लिए तपस्या जरूरी | रामकिशोर सिंह 'विरागी' |
| 18 | और देव सो जाएंगे | राजीव कटारा |
| 19 | सत्य को जानें | महायोगी पायलट बाबा |
| 19 | जीवन प्रदाता शिव अभिषेक | प्राची प्रवीन माहेश्वरी |
| 20 | पहले क्यों नहीं दिखतीं किसी की अच्छाइयां | कपिल कौशिक |
| 20 | भारत बदला, लोग बदले | आभा दवेसर |
| 21 | परोपकार का यथार्थ | डॉ. कुलभूषण लाल मखीजा |
| 22 | मनुष्य के दो शत्रु: चिंता और भय | रेनू सैनी |
| 23 | कल्पना के पंख लगाइए | आरती जैन-खुशबू जैन |
| 26 | आत्म सत्ता से बड़ी कोई सत्ता नहीं | हुकमचंद सोगानी |
| 27 | शिव देवता भी हैं, दर्शन भी | हरिओम शास्त्री |
| 28 | जीवन का आधार है प्रेम | मंजुला जैन |
| 29 | अपना विश्वास ही हमें आगे बढ़ाएगा | रमेश भाई ओझा |
| 30 | नये संकल्प के साथ मनाएं स्वतंत्रता दिवस | डॉ. आनंद प्रकाश त्रिपाठी |
| 31 | शांति के साथ परिवार में कैसे जीएं | साध्वी राजीमती |
| 32 | घर छोड़ना और निठल्ला रहना ही संन्यास है? | आचार्य शिवेन्द्र नागरजी |
| 33 | क्या परिवार के रिश्ते होते हैं डिस्पोजेबल? | डॉ. हीरालाल जैन 'छाजेड़' |
| 34 | मृत्यु सिर्फ हमारी एक कल्पना है | सद्गुरु जग्गी वासुदेव |
| 34 | भक्त और भगवान | श्री आनंदमूर्ति |
| 35 | नागों का पूजने से होती हैं मनोकामनाएं पूरी | बेला गर्ग |
| 36 | सांइस में भी हैं जिंदगी संवारने वाले कमांडमेंट्स | बलदेव राज दावर |
| 37 | प्रेरणा देने वाले राज चेट्टी | जनार्दन शर्मा |
| 37 | तीन डर | मुरली कांठेड़ |
| 38 | श्रीकृष्ण ही धर्म है | आचार्य सुदर्शन |
| 39 | श्री तिरुपति बालाजी | कृष्णचंद टवाणी |
| 40 | Eid that brings people together | Maulana Whahiduddin Khan |
| 40 | Appropriate counsel for path of righteousness | Radha Prathi |
| 41 | Awaken 'Krishna' in your consciousness | Sri Sri Ravishankar |
| 42 | वास्तु और पारिवारिक संबंध | पंडित दयानंद शास्त्री |
| 45 | श्रवणबेलगोल: अहं विसर्जन की अमर गाथा | पुखराज सेठिया |
| 46 | बोलना एक कला है | गणि राजेन्द्र विजय |



मार्गदर्शक: **गणि राजेन्द्र विजय** संपादक: **ललित गर्ग** (9811051133)

डिजाइन: **कल्पना प्रिंटोग्राफिक्स** (9910406059) वितरण व्यवस्थापक: **बरुण कुमार सिंह** +91-9968126797, 011-29847741, **कार्यालय:** ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज दिल्ली-110092

फोन: 011-22727486, **E-mail: lalitgarg11@gmail.com**

**शुल्क:** वार्षिक: 300 रु., दस वर्षीय: 2100 रु., पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092. Editor : Lalit Garg

## सुखी परिवार फाउंडेशन एवं गुजरात सरकार द्वारा संचालित

# एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय, कवांट

(एक अभिनव आदिवासी शिक्षा एवं जन कल्याण का विशिष्ट उपक्रम)

## 'धर्मपुत्र-धर्मपिता' योजना

### आदिवासी एवं पिछड़े छात्रों को इंतजार है आपके सौजन्य का

गरीब, असमर्थ एवं अभावग्रस्त छात्रों को 'धर्मपुत्र' के रूप में गोद लें।

- ◆एक 'धर्मपुत्र' की मासिक सौजन्यता राशि : रु. १,०००/-
- ◆एक 'धर्मपुत्र' की वार्षिक सदस्यता राशि : रु. १२,०००/- एकमुश्त दी जा सकती है।
- ◆समस्त अनुदान आयकर अधिनियम की धारा ८०जी के अंतर्गत आयकर से मुक्त होगा।
- ◆अनुदान राशि का चेक/ड्राफ्ट सुखी परिवार फाउंडेशन के नाम देय होगा।

**आपका सहयोग : समाज की प्रगति**

## SUKHI PARIVAR FOUNDATION

Head Office :
T. S. W. Center, A-41/A, Road No.-1, Mahipalpur Chowk, New Delhi-110 037
Phone: 011-26782036, 26782037
Kawat Office :
Eklavya Model Residential School, Kawant Taluka, Distt. Vadodara, Gujrat

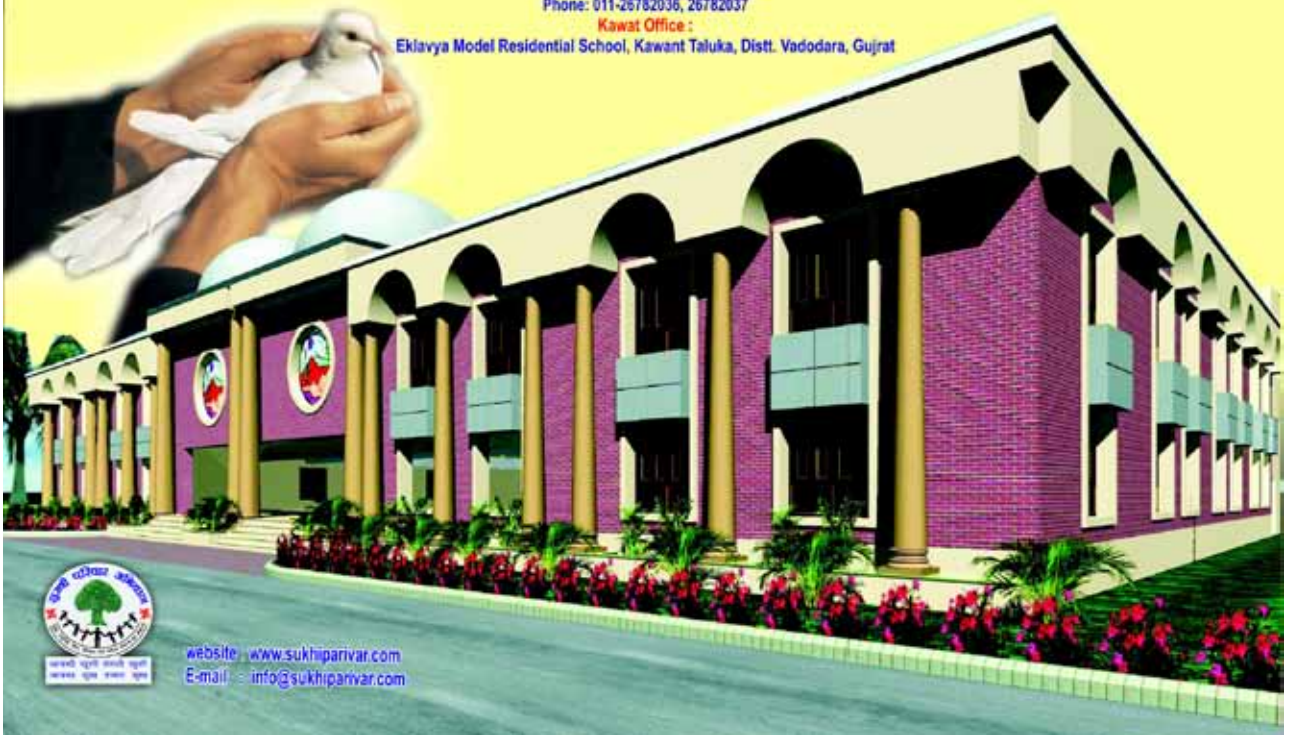

website : www.sukhiparivar.com
E-mail : info@sukhiparivar.com

संपादकीय

# समस्या का मूल है 'स्व-तंत्र' जुड़ना

स्वतंत्रता हमारा स्वभाव है। हम जब भी स्वभाव से हटते हैं, विभावों की भीड़ हमारे इर्द-गिर्द समस्याओं को खड़ा कर देती है और तब हम स्वतंत्रता के वास्तविक मायनों को ढूंढते हैं। स्वतंत्र भारत का राजनीतिक धरातल भी अपने स्वभाव को छोड़कर विभावों में जीने का आदी होता जा रहा है और इसी ने अनेक समस्याओं को जन्म दिया है। इसी से चुनाव प्रणाली भी दूषित हो गयी है। समस्याएं इतनी सघन और विकट है कि उसके समाधान तलाशे जाने जरूरी हो गये हैं। इसी दृष्टि से सुप्रीम कोर्ट के हाल ही में लिए गए दो फैसले स्वागत योग्य है। इनमें से एक किसी भी सजा पाये व्यक्ति को चुनाव लड़ने से रोकता है और दूसरा जेल में बंद व्यक्तियों के चुनाव लड़ने पर रोक लगाता है। इन फैसलों से राजनीति के अपराधीकरण पर कितना नियंत्रण हो पायेगा, यह भविष्य के गर्भ में है। प्रश्न यहां राजनीति के शुद्धिकरण एवं अपराधमुक्त राजनीति का है। प्रश्न यहां चुनाव प्रणाली को भी दुरस्त करने का है। ज्यादा जरूरी है न्यायपालिका की सक्रियता एवं पुलिस न्यायिक व्यवस्था की। न्याय में देरी ने राजनीति का ही नहीं, पूरे समाज का अपराधीकरण कर डाला है। चुनाव प्रणाली भी काफी हद तक ठीक होने पर भी उसमें अभी भी सुधार की गुंजाइश है और सबसे बड़ी आवश्यकता है 'फीयर ऑफ एक्शन' की अर्थात् नियम और कानून को भंग करने पर दण्ड का भय क्योंकि उस भय से ही कानून एवं व्यवस्था की पालना करवाई जा सकती। पर अभी जैसे बीज बोये जा रहे हैं उससे अच्छी खेती की उम्मीद कैसे की जा सकती है?

राजनीति और व्यापार की कुछ सबसे बड़ी गड़बड़ियां पुलिस न्यायिक व्यवस्था से ही पैदा होती है। अच्छाई और साफ-सुथरी स्थितियों को निर्मित करने के लिए जरूरी है कि चेहरा ही नहीं बदले, दिल भी बदले। सोच को संकल्प के ढांचे में ढाला जाए। इसके लिए हमें ऊंचे मानदंड निर्धारित करने होंगे- अपने लिए भी और नेतृत्व के लिए भी। आज राजनीति में अनैतिकता, भ्रष्टाचार, अपराध, अराजकता और स्वार्थ से युक्त भावनाओं का बोलबाला है। समस्याओं के घने धुंधलके एवं हमारे पिछड़ेपन का कारण है कि हम 'स्व-तंत्र' से जुड़कर रह गए। हमने सिर्फ वही सोचा और वही किया जो व्यक्तिगत उपलब्धि के लिए जरूरी था। व्यक्ति महत्वपूर्ण होता जा रहा है और राष्ट्र गौण।

चुनाव और भारतीय जीवन दोनों एक-दूसरे के आवश्यक अंग बन गए हैं और जो आवश्यक हो जाता है उसका शुद्ध होना भी उतना ही आवश्यक है। मतदाता हर चुनाव को रचाकर और अधिक अनुभवी व समझदार होकर निकलता है। पर कुछ दिशाएं अभी वह निर्धारित नहीं कर पाया है। लोकतंत्र में सही भूमिका अदा करने का सही प्रशिक्षण अभी उसे मिला नहीं है। जिसके अभाव में वह दिग्भ्रमित है।

खर्चीला, धांधलीभरा एवं धनबल, बाहुबल के दुरुपयोग से निम्नस्तर के हथकण्डे अपनाकर तथा मतदान केन्द्रों पर कब्जा करके जो एक प्रकार का आतंक पैदा किया जाता है उससे किसी सज्जन व चरित्रवान तथा सीमित साधनों वाले व्यक्ति के लिए चुनाव लड़ना बहुत मुश्किल हो जाता है तब मतदाता के सामने चयन का उचित विकल्प नहीं रहता।

इस मानसिकता के चलते हम अपने कथित नेतृत्व का सही-गलत सब स्वीकार कर लेते हैं। आखिर क्यों? कब तक हमें नेताओं का झूठ झूठ नहीं लगता रहेगा? कब तक हम उनके अपराधों को अपराध नहीं मानते रहेंगे? कब तक हम नेताओं को साम्प्रदायिकता का जहर फैलाने की स्वतंत्रता देते रहेंगे? कब तक नेता लोग जाति के आधार पर हमारी भावनाओं से खेलते रहेंगे? लोकतांत्रिक मूल्यों और मर्यादाओं का तकाजा है कि नेतृत्व को हमेशा औचित्य की कसौटी पर कसा जाए। उसकी कथनी-करनी पर लगातार नजर रखी जाए। जनतंत्र में जनता को वैसा ही नेतृत्व मिलता है जिसके वह लायक होती है। अक्सर हम राजनीतिक भ्रष्टाचार और अपराधीकरण की बढ़-चढ़कर चर्चा करते हैं लेकिन यह क्यों भूल जाते हैं कि इसका कारण कहीं-न-कहीं हम स्वयं भी हैं। आज कौन किसके लिए जीता-मरता है? सभी अपनी स्वार्थों की फसल को धूप-छांव देने की तलाश में हैं। इसी से समाज में संवेदनहीनता पनप रही है, वह व्यवस्था के सड़ने का संकेत है। संवेदनहीन और अहंकारी नेतृत्व इसी सड़ांध को आकार देता है। इधर राजनीतिक पार्टियों को आरटीआई के दायरे में लाने का मामला भी पेचीदा होता जा रहा है। राजनीतिक दल और राजनेता आखिर क्यों आरटीआई की परिधि में आने से घबरा रहे हैं। अमेरिका में जब वहां के राष्ट्रपति के चुनाव में सारे उम्मीदवारों को फेडरल इलेक्शन कमीशन के सामने पायी-पायी का हिसाब देना होता है और ऐसा करते हुए वहां के उम्मीदवार तत्पर होते हैं। इन उम्मीदवारों को यह बताने में भी शर्म महसूस नहीं होती कि उन्होंने अमुक कंपनी या अमुक पूंजीपति से इतना चुनावी अनुदान लिया है। लेकिन विडम्बना देखिए कि हमारे देश की पार्टियां और उनके राजनेता अपने आपको आम आदमी का हितैषी कहते हुए भी उन्हीं से सच बताने में गुरेज करते हैं। कहीं-न-कहीं विसंगति और अपराध की मानसिकता ही काम करती है। इसी के चलते चुनाव के नाम पर करोड़ों-अरबों रुपये का लेन-देन हो जाता है। जबकि इन राजनीतिक दलों को सरकार से अनेक तरह के फंड प्राप्त होते हैं, जो जनता का पैसा है। इसलिए उनकी जवाबदेही जनता के प्रति है।

क्या इस प्रकार लोकतंत्र मजबूत होता है? क्या इस प्रकार सही चयन हो सकता है? जन प्रतिनिधि और मतदाता दोनों एक-दूसरे को ठग रहे हैं। अपनी-अपनी पार्टी के परचम के सामने हाथ उठाकर सिद्धांतों के प्रति वफादारी दिखाने वाले हाथ खरीद-फरोख्त में कितने नीचे उतर आते हैं। ऐसे अविश्वसनीय लोग कैसे सत्ता और सेवा का पवित्र दायित्व उठा सकेंगे?

देश चिंतन के उस मोड़ पर खड़ा है जहां एक समस्या खत्म नहीं होती, उससे पहले अनेक समस्याएं एक साथ फन उठा लेती हैं। ऐसे समय में देश की अस्तित्व और अस्मिता को सुरक्षित रखने के लिए सही समय पर सही निर्णय लेने वाले दूरदर्शी, समझदार, सच्चे भारतवासी की जरूरत है जो न शस्त्र की भाषा में सोचता हो, न सत्ता की भाषा में बोलता हो और न स्वार्थ की तुला में सबको तोलता हो।

# सत्य की गहराई तक पहुंचें

**स्वामी चिन्मयानंद**

अपने शुद्ध भाव और उच्च आदर्शों की अवहेलना किए बिना अपना आदरपूर्ण जीवन जिएं और सरल भाव से कार्य करते रहें। अपने आप को हम अपमानित न करें। आत्मसम्मान का जीवन जिएं। संसार में व्यवहार करते समय हम सदा अपने गौरव की रक्षा में सावधान रहें। हमारी मानसिकता आशावादी, प्रसन्न, ईमानदार और साहसी हुई तो वह हमारे उठने, बैठने और चलने में सर्वत्र व्यक्त होगी। प्रारंभ में ऐसा स्वस्थ मानसिक भाव रख पाना कठिन होता है। इसमें निराश होने की आवश्यकता नहीं है। बार-बार प्रयास करते रहें। प्रयास करने से ऐसा भाव विकसित हो सकता है। हम यह अवश्य करें।

जैसा हमारा मन हमारे कार्यों में प्रतिबिंबित होता है, उसी प्रकार हमारी शारीरिक दशा और कार्यों का प्रभाव हमारे मन पर पड़ता है। इन दोनों में अधिक आसान यही है कि शारीरिक आदतों को परिमार्जित रूप देकर स्थिर बनाएं। उसके उपरांत मानसिक भावों में परिष्कार करना सरल होगा। अंत में मन को ही प्रशिक्षित और शांत बनाना है। इस पर विजय बनाएं। हम यह अवश्य करें।

भली-भांति पूरे रूप से जीवन जीने वाला, अपने कर्तव्यों-कर्मों को सुचारू रूप से करने वाला और अपने हृदय में सदा ईश्वर भक्ति की गुंजार करते रहने वाला व्यक्ति निश्चय ही अपने आकर्षक व्यक्तित्व से उन लोगों को प्रभावित करेगा जो दुखी, निराश और शिथिल जीवन जी रहे हैं। धर्म प्रचारक को निरंतर ही ऐसे लोगों के बीच में काम करना पड़ता है। उनका आधा काम उसी समय संपन्न हो जाता है जब वे अपने सशक्त और आकर्षक व्यक्तित्व से उन्हें प्रभावित करते हैं और अपनी प्रसन्नता और आशा से परिपूर्ण भावों से उनका हृदय प्लावित कर देते हैं। समाज की प्रभावशाली सेवा करने का यह गुण हम अवश्य सीखें। इसके फलस्वरूप हम समाज की अधिक उत्तम सेवा ही नहीं करेंगे वरन् जब हम सायंकाल अपने ध्यान के आसन पर बैठेंगे तो सरलता से मानसिक एकाग्रता से सत्य की गहराई तक पहुंच सकेंगे।

अपनी आंतरिक अपूर्णता के कारण आज संसार भर का मनुष्य पथभ्रांत होकर जो दुख उठा रहा है, उससे बचने के लिए पहले की अपेक्षा इस समय धर्म की सबसे अधिक आवश्यकता है। इसमें संदेह नहीं कि यह नई पीढ़ी दर्शन को जानने और समझने की सहज योग्यता रखती है किन्तु उसमें इतना बचपना है कि वह अपने आंतरिक आदेश का भी पालन नहीं कर पाती। हम साहसपूर्वक आगे बढ़ें, कर्तव्य और सेवा के व्यापक क्षेत्र में आएं, प्रेम और प्रसन्नता के सूक्ष्म स्तरों पर ऊपर उठें। श्रेष्ठ धर्मों में इसी बात पर दृढ़ता के साथ बल दिया गया है और सूक्ष्म रूप से इसी ओर संकेत दिया गया है। वे अपने प्रसिद्ध उद्घोषों में इसकी निश्चयात्मकता की ओर हमारी आध्यात्मिक परम्परा की स्पष्ट गर्जना करते हैं।

आध्यात्मिक संपत्ति से सुसंपन्न होकर हम अपने आसपास लोगों की सेवा करने का आनंद लें और अपने अंदर से नित्य नवीन उत्साह की प्रचण्ड धारा बहने दें।

अज्ञान के कारण लड़खड़ा कर दुख की गहरी घाटियों में गिरे लोगों को वहां से निकालकर ऊपर लाने वाले ऐसे ही शुद्ध हृदय के साहसी वीरों की आवश्यकता है। विश्व उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। अपने मोह जाल में फंसे और अनंत दुख भोगने वाले बंधुओं की रक्षा हम अवश्य करें।

मूल्यहीन वस्तु, अड़चन और कठोरता से बचें और उनसे तटस्थ रहना सीखें। वे सबके सामने आड़े आती हैं। स्फूर्तिमय जीवन का चयन करने वाले व्यक्ति के सामने उनका आना संभव है। हम उनके कारण अपना मूल्यवान समय क्यों नष्ट करें? हम उनसे अवश्य ऊपर उठें। ●

---

# जिंदादिली के 300 महीने

मेरा मानना है कि हम इंसानों में से ज्यादातर अपनी जिंदगी के 300 महीने ही उत्पादक और बौद्धिक जिंदगी जीते हैं। इस अवधि को जिंदादिली की अवधि मानना चाहिए। पर 300 महीनों की यह मियाद सिर्फ उन लोगों पर लागू होती है जो पूरी उम्र शॉपिंग और बच्चों को स्कूल छोड़ने-भेजने जैसी गतिविधियों में ही नहीं लगे रहते। मैं जिन लोगों की बात कर रहा हूं, वैसे सक्रिय लोग हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में ही दिखते हैं। ऐसे कुछ लोग नौकरियां करते हुए भी अपनी बौद्धिक क्षमताओं का बेहतर इस्तेमाल कर रहे होते हैं। पर कभी-कभी आप पाएंगे कि अचानक उनकी ये क्षमताएं चुक गईं। अपने कार्य के प्रति समर्पित, अपने काम को पसंद करने वाले और उसमें अच्छा भविष्य देखने वाले व्यक्ति अचानक इतना क्यों उकता जाते हैं कि उन्हें अपने सहयोगी और अपना काम फालतू लगने लगता है। वे महसूस करते हैं कि अब उनसे कुछ अच्छा नहीं होगा। लोगों में ऐसी प्रवृत्ति पैदा होने का न सिर्फ आर्थिक असर होता है बल्कि एक क्रियाशील व्यक्ति या कहें कि ह्युमन बीइंग के नाते एक सामाजिक असर भी होता है। ऐसी दुनिया में, जहां कर्म की इतनी अहमियत है, सक्रिय लोगों की क्रियाशीलता के ऐसे अवसान पर गंभीरता से विचार होना चाहिए।

**-एंथनी क्लिफ्फोर्ड ग्रेलिंग**
**ब्रिटिश दार्शनिक**

# कितना दें और क्यों ?

**बिल क्लिंटन**

हम कितना धन दे सकते हैं, इसका उदाहरण समय, कौशल, वस्तुओं के मेल-मिलाप तथा नई शुरुआत के लिए दिए जाने वाले उपहारों पर भी लागू होता है। यदि हम मात्र अपनी सामर्थ्य के अनुसार सब कुछ देते हैं तो सकारात्मक प्रभाव लड़खड़ाने लगेगा। अमेरिका में हम में से अनेक लोग अपनी सामर्थ्य की तुलना में कहीं अधिक मदद की मांग से घिरे हैं। हम सबको समय और धन संबंधी प्रतियोगी दावों में से सही का फैसला करना है। क्या हम एक परियोजना के संसाधनों या उन्हें चारों और फैलाने पर केन्द्रित हैं? आप भी अवसर का लाभ उठा सकते हैं, लेकिन पहले आपको यह फैसला करना है कि क्या हमें कुछ देना है या नहीं, यदि देना है तो कितना देना है?

कुछ लोग इतना ज्यादा क्यों देते हैं, जबकि अन्य कम-से-कम देते हैं या बिल्कुल ही नहीं देते? मैंने इस पर बहुत विचार-विमर्श किया है। मुझे ऐसा लगता है कि हम कई कारणों से दान देते हैं। इसकी जड़े उस दुनिया में निहित हैं, जिसमें हम रहते हैं, जिसके बारे में सोचते हैं। हमारी सोच पर दान की मात्रा निर्भर करती है। हम देते हैं, क्योंकि हमारे विचार में, इससे आज दूसरों को मदद मिलेगी या हम अपने बच्चों को बेहतर भविष्य दे रहे हैं, क्योंकि हम धार्मिक या नैतिक धारणाओं के कारण अपनी यह नैतिक जिम्मेदारी समझते हैं, क्योंकि हमारे किसी परिचित तथा ऐसे व्यक्ति ने हमसे मदद मांगी है, जिसकी हम बहुत इज्जत करते हैं। भौतिक सुखों पर अधिकार जमाने या मनोरंजन अथवा ऐसे ही किसी कार्य पर समय बिताने की बजाय हम दान करने को अधिक सार्थक और आनंददायी समझते हैं।

जब हम किसी को कुछ नहीं देते, तब मेरे विचार में इसके दो कारण नजर आते हैं। ऐसे लोगों को विश्वास नहीं होता कि ऐसा कुछ कर सकते हैं, जिससे कोई बदलाव आएगा, क्योंकि या तो उनके संसाधन बहुत सीमित होते हैं या वे समझते हैं कि दूसरे लोगों के जीवन में बदलाव लाने के लिए उनके प्रयास निष्फल हो जायेंगे। यह नहीं महसूस करते कि किसी को कुछ देना उनकी नैतिक जिम्मेदारी है। न ही उन्हें किसी ने ऐसा कुछ करने के लिए कहा। उनका मानना है कि यदि वे स्वयं तथा अपने परिवार के लिए पैसा और समय बचाकर रखते हैं तो जीवन का अधिक आनंद उठा पायेंगे।

सभी धर्मों में कहा गया है कि एक-दूसरे की मदद करना हम सबका साझा दायित्व

**भोगासक्ति तथा आत्मघात की कहानियां आधुनिक संस्कृति की पहचान बन गई हैं। आधुनिक राजनीति ईमानदार मतभेदों पर नहीं टिकी है, बल्कि इसमें व्यक्तिगत रूप से आक्षेप लगाए जाते हैं।**

है। यहूदी कानून और परम्परा में दान अर्थात् 'जेकदाह' अनिवार्य है। व्यक्ति को अपनी आय का कम-से-कम 10 प्रतिशत दान करना चाहिए। हिबू भाषा में 'जेदकाह' का अर्थ 'सत' है, लेकिन इसका अन्य अर्थ 'न्याय करना' तथा जरूरतमंदों की मदद करना या देना' भी है। सही व्यक्ति दान के माध्यम से सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष करता है। यहूदियों के संगठनों में अमेरिकन ज्यूइश वर्ल्ड सर्विस, यूनाइटेड ज्यूइश अपील, एंटी-डिफेमेशन लीग तथा मैजॉन शामिल हैं। ये सभी इजराइल में अपने देश के महत्वपूर्ण उद्देश्यों को बढ़ावा देने के लिए अलग-अलग राशि दान करते हैं साथ ही विश्वभर के गरीब देशों की मदद करते हैं। यह दर्शाया गया है कि इनसे जुड़े लोगों के दिलों में 'जेकदाह' का गहरा प्रभाव है।

इस्लाम में भी दान 'जकात' की बात कही गई है। इस धर्म के मानने वालों के लिए दान करना अनिवार्य है। समस्त ईसाई समुदाय को सिखाया जाता है कि सबसे बड़ा वरदान यही है कि लेने की बजाय देने के लिए हाथ बढ़ाया जाए। विश्वभर में अधिक-से-अधिक संगठन लोगों की मदद कर रहे हैं, भले ही उनका कोई भी धर्म हो। बौद्ध मतावलंबी मानते हैं कि आनंद-प्राप्ति के मार्ग में दान करना अनिवार्य है। उनका मानना है कि स्वार्थ से दान की भावना का दमन होता है, विकास अवरुद्ध हो जाता है। दान से उन लोगों को लाभ पहुंचना चाहिए, जिन्हें इसकी जरूरत है, फिर उनका धर्म कोई भी हो, चाहे वे कहीं भी रहते हों।

क्या दान से आपकी खुशी मिलेगी? इसका जवाब आपको स्वयं देना होगा। जब मैं बिल तथा मेलिंडा गेट्स के साथ अफ्रीका में था तो मैंने उन्हें वहां के ग्रामीणों के साथ बातें करते देखा। उन लोगों के जीवन में सुधार आया था और वे सभी खुश नजर आ रहे थे। मैंने देखा कि छोटी सी ब्रिएन श्वांते के पूरे शरीर में टूटी हड्डियां हैं और वह मिसीसिपी में बाढ़-प्रभावित लोगों की मदद कर रही है और वह कितनी खुश नजर आ रही है। मैंने जॉन ब्रयांट को गरीब बच्चों की आंखों में आशाएं जगाते देखा, जो उनको समझा रहे थे कि कैसे वे अपने जीवन में बदलाव ला सकते हैं। उस समय वह बेहद खुश थे। जब मैं ओसिओला मैकार्टी से मिला, वह दूसरों के शिक्षा के अवसर देने के लिए समर्पित थी, जबकि उसे पढ़ने का मौका नहीं मिल पाया, तब वह बहुत खुश थी। जब कार्लोस स्लिम ने ऐसे दस हजार युवक-युवतियों की भीड़ देखी, जिन्हें कॉलेज भेजा जाना था, तब वह खुश था। जब दो प्रतिष्ठित हस्तियों बारबरा स्ट्रेसैंड तथा रूपर्ट मर्डोक राजनीतिक क्षेत्र की लगभग हर बात से असहमत थे, वे दोनों पहली बार जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध संघर्षरत मेरे फाउंडेशन में योगदान देने के लिए खड़े हो गए। वे खुश नजर आ रहे थे। जब क्रिस तथा बेसिल स्टेमोस, क्रिस हॉन तथा जैसी कूपर-हॉन, फ्रेंक गियस्त्रा एवं फ्रेड इशनेर तथा अन्य सभी लोगों ने मेरे द्वारा किए जा रहे एड्स सहायता कार्य में फंड दिया और आज जब वे उन जीवित बच्चों की आंखों में झांकते हैं तो उन्हें कितनी खुशी मिलती है।

भोगासक्ति तथा आत्मघात की कहानियां आधुनिक संस्कृति की पहचान बन गई हैं। आधुनिक राजनीति ईमानदार मतभेदों पर नहीं टिकी है, बल्कि इसमें व्यक्तिगत रूप से आक्षेप लगाए जाते हैं। आज के मीडिया पर ऐसे लोगों का एकाधिकार तथा दबदबा है, जो दूसरों को नीचा दिखाकर स्वयं को सौभाग्यशाली मानते हैं, अपने बुरे समय को परिभाषित करते हैं, अपनी तकलीफों को भुनाना चाहते हैं। अधिक खुश कौन है? एकता के सूत्र में बांधने वाले या फूट डालने वाले? निर्माता या विध्वंसक? देने वाले या छीनने वाले?

मैं सोचता हूं कि आप इसका उत्तर जानते हैं। पूरी दुनिया को, महासागरों के पार सभी जगह, आपकी जरूरत है। दीजिए, सबको दीजिए! विश्व का कल्याण होगा! ●

# विवाह
# कितना सुख है बंधन में

देवलीना चड्ढा

अक्सर लोगों को यह कहते सुना जाता है कि जोड़ियां स्वर्ग में बनती हैं, लेकिन विवाह के पीछे की मूल भावना इस बात को दर्शाती है कि यह स्त्री और पुरुष के बीच एक स्थायी एवं अडिग वफादारी तथा प्रेम का रिश्ता होता है। शादियां जरूरी क्यों होती हैं? ऐसा इसलिए क्योंकि यह एक नई स्थिति का प्रवेश द्वार होता है- दो लोगों के बीच एक नए रिश्ते का सूत्रपात होता है। संस्थाओं, संस्कृतियों, लोकरीतियों, विचारों और आदर्शों को स्थापित करने के लिए भी यह जरूरी है। इसके अलावा यह परिवार और समुदाय के प्रति एक सामाजिक दायित्व भी है।

एक निश्चित उम्र के बाद इंसान को प्रेम, आर्थिक सुरक्षा, भावनात्मक अवलम्बन और अकेलेपन से मुक्ति की जरूरत महसूस होने लगती है। इन्हीं कुछ प्रमुख कारणों से प्राचीन काल से लोग दाम्पत्य बंधन में बंधते चले आ रहे हैं। हर इंसान को संतुष्टि और खुशी के लिए किसी के प्रति विश्वास रखने की जरूरत होती है। उसे किसी ऐसे साथी की जरूरत होती है जो उसकी बात को बिना कहे जान ले और जो उसके मन की गहराइयों को झांक सके। विवाह इस सभी जरूरतों को पूरा करता है। लेकिन विवाह की इस अवधारणा के प्रति स्त्री और पुरुष दोनों के नजरिए में धीरे-धीरे बदलाव आ रहा है।

वैवाहिक जीवन में एक सीमा के बाद त्याग की जरूरत पड़ती है और कुछ समझौते भी करने पड़ते हैं। शादी-विवाह साथ-साथ चलने, सुसंगति और व्यक्तिगत संतुष्टि की नई राह है। इस विषय में टीवी एंकर जयश्री अरोड़ा का कहना है कि विवाह के प्रति लोगों के विचारों में निश्चित रूप से कुछ बदलाव जरूर आए हैं। औरत अब सोचती है कि पुरुष से किसी मामले में पीछे न होकर उसके समकक्ष खड़ी है। एक औरत अब बहुत-सी भूमिकाएं निभा रही है। वह अब लक्ष्मण रेखा की दास नहीं रही। आर्थिक दृष्टि से भी वह आत्मनिर्भर हो रही है। आत्मविश्वास और साहस की वह नित नई इबारत लिख रही है।

मनोवैज्ञानिक और शिक्षाविद् अनिता जुल्का कहती है कि वैसे तो प्यार के बिना शादी का कोई औचित्य ही नहीं रह जाता। जहां ऐरेंज्ड मैरेज होती है वहां शादी के बाद प्यार की संभावना ज्यादा होती है। मैं कहना चाहूंगी कि यह एक ऐसी व्यवस्था है जहां हमें किसी इंसान से इसलिए प्यार करना चाहिए क्योंकि हमने उससे शादी की है। बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है उसे अपनी देखभाल की जिम्मेदारी उठानी पड़ती है और वह स्वतंत्र होकर सोचता भी है। मैं समझती हूं कि इस तरह के वयस्क जब किसी से प्यार करते हैं तो उससे जुड़ी जिम्मेदारियों को भी निभाते हैं यह एक अलग मामला है। इसके टूटने और बने रहने के कई कारण हो सकते हैं जैसे आपसी तालमेल, समझ और किसी मुद्दे पर समझौते की भावना। शादी से पहले या शादी के बाद जब भी आप किसी से प्यार करते हैं तो यह आपका फैसला होता है और इसके परिणामों के लिए आप स्वयं जिम्मेदार होते हैं।

शादी के मुद्दे पर अक्सर कई लोगों को यह कहते सुना जाता है कि 'आगे कुछ नहीं मिलता।' आपसी तालमेल और समझ जैसे छोटे मुद्दे बढ़ते जाते हैं और जीवन की बड़ी बातें उनके सामने कोई मायने नहीं रखतीं। कुछ दंपतियों का ऐसा मानना है कि पुरुष मंगल से जुड़े होते हैं और स्त्रियां शुक्र से संबंधित होती हैं, इसलिए उनके व्यक्तित्व में अंतर पाया जाता है। हालांकि जब दो लोग अपना अधिकतर समय साथ बिताते हैं उन्हें एक-दूसरे को अच्छी तरह से समझने-जानने में आसानी होती है। हर व्यक्ति का, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष उसका अपना व्यक्तित्व होता है, अपनी पसंद-नापसंद होती है।

वैवाहिक जीवन में जब हर हालत में पति और पत्नी एक-दूसरे का आदर करते हैं और एक-दूसरे की रुचियों के हिसाब से काम करते हैं तो निश्चित रूप से वह शादी खुशहाल साबित होती है। वैसे तो आजकल शादियों में मिलने वाला सामाजिक समर्थन अब घट रहा है, लेकिन सामाजिक स्वीकृति की अब भी जरूरत है। विवाह के संस्थात्मक रूप की अपेक्षा उसका व्यक्तिगत रूप की अपेक्षा उसका व्यक्तिगत रूप अब अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। विवाह का नूतन पर्याय अब यह हो गया है कि कोई इंसान किसी के लिए क्या महसूस करता है और वे आपस में एक-दूसरे से कितने संतुष्ट हैं।

बदलते समय के साथ स्त्री और पुरुष के विचारों में बहुत परिवर्तन आए हैं। दोनों ही यह चाहते हैं कि उसके जीवनसाथी में कुछ खास तरह की विशेषताएं हों, वह एक बहुमुखी व बहुआयामी प्रतिभा का धनी हो। वह एक साथ बहुत सी भूमिकाएं निभाए। एक पुरुष से यह उम्मीद की जाती है कि वह घर के कामों में मदद करे, बच्चों का अच्छा साथी बने और अपनी पत्नी को आगे बढ़ाने में न केवल उसकी मदद करे, बल्कि उसकी जरूरतों का भी ख्याल रखे। दूसरी ओर, एक औरत के नजरिए में भी बहुत बदलाव देखने में आया है। अब वह सफल पेशेवर, समझदार मां, कुशल गृहिणी, योग्य मैनेजर और अपने पति के व्यक्तिगत रिश्तों में एक समझदार साथी की तरह रहने की कोशिश कर रही है।

जीवन में खुशहाली लाने और दाम्पत्य जीवन को बेहतर बनाने में चुनौतियों का समाना करना पड़ता है। इसमें कोई शक नहीं है कि स्त्री और पुरुष दोनों ही कठिन दौर से गुजर रहे होते हैं, लेकिन शायद जीना भी तो इसी का नाम है। शादी को ठीक तरह से चलाने के लिए कोई खास किस्म के नियम नहीं होते हैं। आपस में ठीक तरीके से रहने के लिए सही दृष्टिकोण का होना जरूरी होता है। ●

# चलो रे भैया, चलिहें नरबदा के तीर

प्रो. अश्विनी केशरवानी

सतपुड़ा-मैकल और विंध्य पर्वत श्रृंखला के संधि स्थल पर सुरम्य नील वादियों में बसा अमरकंटक एक अनुपम पर्यटन स्थल है। हमारा देश शीतकालीन पर्यटन स्थलों से भरा है लेकिन अमरकंटक ग्रीष्मकालीन पर्यटन स्थलों में से एक है। इसे प्रकृति और पौराणिकता ने वैविध्य संपदा की धरोहर बख्शी है। चारों ओर हरियाली, दूधधारा और कपिलधारा का झरना जैसा मनोरम दृश्य, सोन नदी की कलकल करती धारा, नर्मदा कुंड की पवित्रता और जहां एक ओर पहाड़ी की हरी-भरी ऊंचाईयां है तो दूसरी ओर खाई का प्रकृति प्रदत्त मनोरम दृश्य मन की गहराईयों को छू जाता है। अमरत्व बोध के इस अलौकिक धाम की यात्रा सचमुच उसके नाम के साथ जुड़े 'कंटक' शब्द को सार्थक करती है। हम जहां दुनिया के छोटी हो जाने का जिक्र करते थकते नहीं, वहीं अमरकंटक की यात्रा आज भी अनुभवों में तकलीफों के शूल चुभो जाता है। लेकिन एक बार सब कुछ सहकर वहां पहुंच जाने के बाद यहां की अलभ्य सुषमा और पौराणिक आभा सब कुछ बिसार देने को बाध्य करती है।

अमरकंटक, मध्यप्रदेश के शहडोल जिलान्तर्गत दक्षिण-पश्चिम में लगभग 80 कि. मी. की दूरी पर स्थित है। अनुपपुर रेलवे जंक्शन से 60 कि.मी., पेंड्रा रोड रेलवे स्टेशन से 45 कि.मी. और बिलासपुर जिला मुख्यालय ये 115 कि.मी. की दूरी पर पर स्थित है। यहां रूकने के लिए अनेक छोटे मोटे धर्मशालाएं, स्वामी श्रीरामकृष्ण परमहंस का आश्रम, बरफानी बाबा का आश्रम, बाबा कल्याणदास सेवा आश्रम, जैन धर्मावलंबियों का सर्वोदय तीर्थ एवं अग्निपीठ, लोकनिर्माण विभाग का विश्रामगृह, साडा का गेस्ट हाउस और म.प्र. पर्यटन विभाग को टूरिस्ट कॉटेज आदि बने हुए हैं। यहां घूमने के लिए तांगा, जीप, आटो रिक्शा आदि मिलता है। खाने के लिए छोटे-बड़े होटल हैं लेकिन 15 कि.मी. पर केंवची का ढ़ाबा में खाना खाने की अच्छी व्यवस्था रहती है। जंगल के बीच खाना खाने का अलग आनंद होता है।

विश्व की प्रमुख संस्कृतियां नदियों के किनारे विकसित हुई परन्तु भारत का प्राचीन सांस्कृतिक इतिहास तो मुख्यत: गंगा, यमुना, सरस्वती और नर्मदा के तट का ही इतिहास है। सरस्वती नदी के तट पर वेदों की ऋचाएं रची गई, तो तमसा नदी के तट पर क्रौंच वध की घटना ने रामायण संस्कृति को जन्म दिया। न केवल आश्रम संस्कृति की सार्थकता और रमणीयता नदियों के किनारे पनपी, वरन् नगरीय सभ्यता का वैभव भी इन्हीं के बल पर बढ़ा। यही कारण है कि नदी के हर लहर के साथ लोकमानस का इतना गहरा तादात्म्य स्थापित हो

गया कि जीवन के हर पग पर जल और नदी संस्कृति ने भारतीयता को परिभाषित कर दिया। छोटे से छोटे और बड़े से बड़े धार्मिक अनुष्ठान और यज्ञ आदि के अवसर पर घर बैठे सभी नदियों का स्मरण इसी भावना का तो संकेत है?

**गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती,**
**नर्मदे सिन्धु कावेरी, जले स्मिनऽसन्निधि कुरू॥**

इस प्रकार मैकलसुत सोन और मैकलसुता नर्मदा दोनों का सामीप्य सिद्ध है। वैसे मैकल से प्रसूत सभी सरिताओं का जल तो अत्यंत पवित्र माना गया है। मणि से निचोड़े गये नीर की तरह..। ऐसे निर्मल पावन जल प्रवाहों की उद्गम स्थली के वंशगुल्म के जल से स्नान, आचमन, यहां तक कि स्पर्श मात्र से यदि अश्वमेघ यज्ञ का फल मिलना बताया गया हो तो उसमें स्नान अवश्य करना चाहिये। लेकिन यह विडम्बना ही है कि अब अमरकंटक की अरण्य स्थली में प्रमुख रूप से नर्मदा और सोन नदी के उद्गम के आसपास एक भी बांस का पेड़ नहीं है। यही नहीं यहां नर्मदा कुंड का पानी पीने लायक भी नहीं है। बल्कि इतना प्रदूषित है कि आचमन तक करने की इच्छा नहीं होती। इसके विपरीत सोन नदी के उद्गम का पानी स्वच्छ और ग्रहण करने योग्य है। नर्मदा कुंड को मनुष्य की कृतिमता ने आधुनिकृत करके सीमित कर दिया है। सोनुमुड़ा-सोन नदी की उद्गम स्थली अभी भी प्रकृति की रमणीयता और सहजता से अलंकृत है। वृक्षों पर बंदरों की उछलकूद और साधु संतों की एकाग्रता यहां की पवित्रता का बोध कराती है।

समुद्र से 3600 फुट की ऊंचाई पर स्थित अमरकंटक प्राचीन काल से ही ऋषि-मुनियों की तपस्थली, लक्ष्मीजी की शरणस्थली और उमा महेश्वर के विहार स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। यहां के पुजारी ने हमें बताया कि यहां आज भी शंकरजी के डमरू की आवाज सुनायी देती है। यही कारण है कि यहां झरनों के किनारे, पहाड़ों की गुफाओं में और आश्रमों में ऋषि-मुनि ध्यानस्थ होते हैं।

सूर्य सिर के उपर चढ़ आया था और हमें नास्ता नसीब नहीं हुआ था। या यूं कहें कि यहां के नैसर्गिक अलभ्य सुषमा के पान करते इतना समय गुजर गया। नास्ता करके फिर हमारा काफिला यहां के दर्शनीय स्थलों-माई का बगिया जो नर्मदा कुंड से मात्र 3 कि.मी. दूर है, सोनुमुड़ा जो उद्गम से 2 कि.मी देर है, देखने के बाद नर्मदा कुंड से लगे प्राचीन मंदिरों को देखने गये। यहां पर 9 वीं और 11-12वीं शताब्दियों में निर्मित अनेक मंदिर हैं। इनमें केशवनारायण, पंचमहला, कर्णेश्वर और जालेश्वर महादेव मंदिर प्रमुख है। इन मंदिरों के समीप स्थित कुंड को वास्तविक 'नर्मदा कुंड' माना जाता है। बहुत कम लोगों को मालूम होगा कि यहां नर्मदा और सोन नदी के अलावा अन्य किसी नदी का भी उद्गम है? यहां से तीसरी 'जोहिला नदी' निकली है। वास्तव में इन नदियों के बारे में यहां प्रचलित जनश्रुतियों के अनुसार ब्रह्मा की आंखों से दो अश्रु बूंदें टपके जो आगे नर्मदा और सोन नदी कहलाये।

**-'राघव' डागा कालोनी**
**चांपा-495671 ( छत्तीसगढ़ )**

# भाग्यवाद के सहारे जीते लोग

डॉ. विजय प्रकाश त्रिपाठी

बहुत समय से अपने भारत में फलित ज्योतिष, ग्रह नक्षत्र और कुण्डली के आधार पर मनुष्य के भाग्य निर्धारण की परम्परा चली आ रही है। इस भाग्यवाद की धारणा ने भारतीय समाज का जितना अहित किया है उतना सभी सामाजिक कुरीतियों ने मिलकर भी नहीं किया। कुरीतियों ने तो मात्र आम समाज की समृद्धि ही छीनी, परन्तु भाग्यवाद ने समाज को अकर्मण्य, आलसी, कायर बना दिया।

आजकल समाज में भाग्यवाद को पोषण देने हेतु हस्तरेखा, अंकशास्त्र व मुखाकृति जैसी विधाएं भी जो पश्चिमी देशों से चलकर आई हैं, विकसित हो रही हैं। जनता अंकों को जोड़ बाकी और गुणा भाग कर अपनी सफलता या असफलता का पूर्वज्ञान जानना चाहती है। जबकि सत्य तो यह है कि प्रयास करने से पूर्व सफलता या असफलता का ज्ञान होना पूर्ण असंभव ही है। संपूर्ण संसार पुरुषार्थ व प्रयत्न प्रधान है न कि भाग्य प्रधान है। भाग्य की न तो कोई सत्ता है और न महत्ता है। दुर्भाग्य अथवा बुरा भविष्य सिर्फ उन्हीं के लिए है जो प्रयत्न-पुरुषार्थ को छोड़कर ज्योतिष भविष्य में विश्वास रखते हैं।

किन्हीं सितारों, शरीर पर बनने वाले चिन्हों या अन्य बातों को जो अपने भविष्य का निर्णायक स्वीकार करेगा, यह कहना नितांत भ्रामक है कि वह सुखी रहेगा। भाग्य या फलित ज्योतिष की आधारभूत मान्यता यह है कि मनुष्य भविष्य में आने वाली प्रतिकूल परिस्थितियों को जान ले और समय रहते उनसे बचने का प्रयत्न करे। मनुष्य अब तक तो भविष्य के गर्भ में झांक नहीं सका है और किन्हीं अंशों में वह भविष्य को जानने में सफल भी हुआ है, इसका समाज पर विपरीत प्रभाव भी पड़ा है। यह बजाय आने वाली प्रतिकूलताओं को झुठलाने की चेष्टा करने के जो कुछ करता है, वह भी छोड़ बैठता है और स्वयं को अभागा मान लेता है।

अभागा वह नहीं है जिसका कल आने वाला संघर्षपूर्ण है, वरन् अभागा वह है जो भावी संघर्षों का यत्किंचित पूर्वाभास पाकर या कि यों ही दुर्भाग्य की कल्पनाएं करता हुआ स्वयं को दीनहीन बना लेता है। अपने प्रति रखे गए विश्वास के अनुसार ही मनुष्य का जीवन घटित होता है। तत्वदर्शन का यह सुनिश्चित सिद्धांत है कि मनुष्य अपना जितना मूल्यांकन करता है, उससे राई रत्ती भी अधिक नहीं प्राप्त कर सकता। मनुष्य स्वयं ही अपने लिए जिस मूल्य का दावा करेगा, न केवल समाज बल्कि अदृश्य शक्तियां भी उसके साथ वैसा ही व्यवहार करेंगी।

**अभागा वह नहीं है जिसका कल आने वाला संघर्षपूर्ण है, वरन् अभागा वह है जो भावी संघर्षों का यत्किंचित पूर्वाभास पाकर या कि यों ही दुर्भाग्य की कल्पनाएं करता हुआ स्वयं को दीनहीन बना लेता है। अपने प्रति रखे गए विश्वास के अनुसार ही मनुष्य का जीवन घटित होता है।**

इस प्रकार स्वयं को अभागा या हेय हीन समझने वाला व्यक्ति कभी प्रगति नहीं कर सकता।

इसका एक मनोवैज्ञानिक कारण भी है। हीनता का भाव आदमी के मनोबल को तोड़ता है। तब उसके प्रयत्न या तो दुर्बल हो जाते हैं अथवा समाप्त उसका पुरुषार्थ टूट जाता है, संघर्ष क्षमता शिथिल हो जाती है और मनोबल भी गिर जाता है। जबकि संघर्ष, पुरुषार्थ व मनोबल के आधार पर ही मनुष्य सफल या असफल होता है। भाग्य निर्धारण में जिन भारतीय व पश्चिमी विद्याओं की सर्वाधिक चर्चा की जाती है उनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं। कुण्डली दर्शन, राशि फल, हस्तरेखा, अंक ज्योतिष, सामुद्रिक ज्ञान और ज्ञान दशा। मुख्यत: भविष्य ज्ञान के लिए इन्हीं जाल जंजालों के चतुर्दिक चक्कर काटा जाता है।

इनमें से सर्वप्रथम कुण्डली को लें। जन्म के समय पर ज्योतिष विज्ञान के कुछ नक्षत्रों की कल्पित गतियों और प्रभावों के आधार पर इसकी रचना की जाती है और फलित ज्योतिष की कुछ मान्यताओं के आधार पर इनका निष्कर्ष निकाला जाता है। कुण्डली का आधारग्रह नक्षत्रों की स्थिति ही है। यहां इस संदर्भ में यह जान लेना चाहिए कि कई ग्रह नक्षत्रों का प्रकाश पृथ्वी पर नहीं पहुंचता। मंगल जो पृथ्वी के सर्वाधिक निकट ग्रह है उसकी पृथ्वी से दूरी 40 करोड़ मील है और अब तक सबसे ज्यादा तेज गति से उड़ने वाले अंतरिक्ष यान को भी वहां तक पहुंचने में लगभग एक वर्ष से अधिक का समय लगा यह निर्जीव ग्रह इतनी दूर स्थित है कि पृथ्वी पर यह भी पता नहीं चल पाता कि वहां क्या हो रहा है, तो पृथ्वी पर बसने वाले लगभग सात अरब लोगों में से प्रत्येक पर यह क्या असर डालेगा और यदि कोई असर हो तो भी यह इतना क्षीण होगा कि सर्वशक्तिमान प्रभु के अंश का उससे प्रभावित होना असंभव ही लगता है। यही तथ्य राशियों के संदर्भ में भी है।

राशिफल के उपरांत हस्तरेखाओं द्वारा भविष्य जानने की सर्वाधिक चेष्टा की जाती है। हस्तरेखाएं निश्चय ही प्रत्येक व्यक्ति की अलग-अलग होती हैं, पर उनके आधार पर भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की रेखाएं एक निश्चित अवधि में बदलती रहती हैं। इसका कारण एक रेखा की स्थिति के आधार पर किया गया भविष्य का विश्लेषण कुछ ही समय बाद अलग अर्थ धारण कर लेता है। वैसे तो भविष्य के संदर्भ में हस्तरेखाओं की कोई अर्थवत्ता ही नहीं है। आधुनिक मनोविज्ञान इस संदर्भ में जिस तह तक पहुंच सका है, वह मात्र व्यक्तित्व की पहचान तक ही सीमित है न कि भविष्य के ज्ञान का कोई आधार सिद्ध हुआ है। सामुद्रिक ज्ञान अर्थात शीरीरिक चिन्हों के संदर्भ में भी यही तथ्य है।

अंक ज्योतिष के आधार पर भविष्य का विश्लेषण संभव नहीं है। इस विद्या का आधारभूत मान्यता यह है कि प्रत्येक अंक का अपना विशिष्ट गुण है। जन्मदिन या नाम के आधार पर मनुष्य का भाग्यांक निकाला जाता है और फिर उन गुणों के आधार पर उसका भविष्यफल तैयार किया जाता है। विचारशील मनुष्य इसके स्वरूप को देखकर ही यह निष्कर्ष निकाल लेते हैं कि इसकी वास्तविकता क्या है?

आज भविष्य के जानने समझने के जितने भी प्रयत्न हो रहे हैं उन सबमें प्राय: अटकलबाजियां ही लगायी जाती हैं। अन्यथा यदि कोई मनुष्य अपना भाग्य जान सका होता तो वह आने वाले संघर्षों व कठिनाइयों से इतना विकल हो जाता कि सुखद वर्तमान का आनंद भी मिट्टी मं मिल जाता। यह अलग तथ्य है कि पुरुषार्थ और परिश्रम से जी चुराने वाले मनुष्य ही भाग्य की दुहाई दिया करते हैं। सम्प्रति विचारधारा इस भाग्यवाद को भी शोषण चक्र का ही एक रूप मानती है। अच्छा हो हम भाग्यवाद के कुचक्र से बाहर आएं और पुरुषार्थ परायण बनें तथा पराक्रम कर अपना भाग्य स्वयं अपने हाथों निर्मित करें।

**–86/323, देवनगर, कानपुर-208003**

# सच्ची मित्रता उत्तम स्वास्थ्य के समान है

सत्यनारायण भटनागर

अरस्तु ने लिखा है, ''दो शरीरों में रहती है एक आत्मा।'' धर्मग्रंथ एवोत्रिका में तो निष्ठावान मित्र को जीवन की औषधि ही कहा गया है।

मित्र औषधि का काम कैसे करते हैं, यह एक विचारणीय प्रश्न है। आज की विषम परिस्थितियों में समस्याओं का मकड़जाल है और इसलिए तनावग्रस्त हो जाना स्वाभाविक है। बच्चे तक हो जाते हैं तनावग्रस्त। ऐसे में अपने तनाव को किससे कहे। कैसे सुलझाएं अपनी समस्या? किससे ले सलाह? ये ऐसे प्रश्न हैं जो मित्र की याद दिलाते हैं। एक मित्र से हम अपनी अत्यंत गोपनीय से गोपनीय बात कह सकते हैं। बात कह देने से हम बहुत हल्के हो जाते हैं और उन क्षणों में मित्र की सहायता, सलाह और मार्गदर्शन हमारे लिए सहारा बन जाता है। आज के इस युग में कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं जो युवक या युवती अपनी पत्नी या पति को भी कहना नहीं चाहती। ऐसे में एक विश्वसनीय मित्र ही सहारा बन उभरता है।

राजा भृतहरि कहते हैं, 'सज्जन लोगों ने अच्छे मित्र के निम्न लक्षण बताए हैं, वह अपने मित्र को पापों से दूर रखता है, उसे अच्छे हितकर कार्यों में लगाता है, उसके गुप्त रहस्यों को छिपाए रहता है और उसके गुणों को उजागर करता है। आपत्ति में साथ नहीं छोड़ता और आवश्यकता पड़ने पर धन भी देता है।' विचार कीजिए ऐसा मित्र तनाव की परिस्थितियों में औषधि का कार्य क्यों नहीं करेगा।

ऐसे मित्र बहुत अधिक नहीं हो सकते। हम जिन्हें सामान्य अर्थों में मित्र कह देते हैं वे मित्र हो नहीं सकते। वे सहयोगी, सहकर्मी और परिचित ही होते हैं। मित्र तो उंगली पर गिने जा सकने वाले ही होते हैं। उनकी संख्या अधिक हो ही नहीं सकती।

हेनरी एडम्स ने कहा है जीवन में एक मित्र मिल गया तो बहुत है। दो अधिक है और तीन तो मिल ही नहीं सकते। इसलिए यदि बहुत अधिक मित्रों की संख्या है तो विचार कीजिए कि ऐसे मित्र कौन हैं जो तनाव के समय मन की गांठ खोल सकें। औषधि बन सकें।

भगवत गीता के प्रथम अध्याय में अर्जुन के संवादों पर ध्यान दीजिए। दूसरे अध्याय के नौ श्लोकों तक ऐसा प्रतीत होता है कि महान धर्नुधारी अर्जुन डिप्रेशन में आ गए है। समस्या है वे युद्ध करे या न करें। युद्ध के मैदान में अर्जुन की इस मनस्थिति पर ध्यान दीजिए। अर्जुन शोक मग्न है। वह अपना कर्तव्य भूल गया है। उसे समझ में नहीं आ रहा है कि वह युद्ध क्यों करें? शोकयुक्त, अश्रुपुरित नेत्रों वाले अर्जुन रथ के आसन पर बैठ गया है। अर्जुन कहता है, 'हे गोविंद! मैं युद्ध नहीं करूंगा और चुप हो गया।'

**हेनरी एडम्स ने कहा है जीवन में एक मित्र मिल गया तो बहुत है। दो अधिक है और तीन तो मिल ही नहीं सकते। इसलिए यदि बहुत अधिक मित्रों की संख्या है तो विचार कीजिए कि ऐसे मित्र कौन हैं जो तनाव के समय मन की गांठ खोल सकें। औषधि बन सकें।**

आज भी जो युवा निराश, हताश हो जाता है उसकी यही स्थिति होती है। अनेक किशोर युवक परीक्षा में असफलता, बेरोजगारी और प्रेम में असफलता के कारण गहन शोक में पड़कर डिप्रेशन के शिकार हो जाते हैं और आत्महत्या कर लेते हैं। आत्महत्या की ये घटनाएं रुक सकती हैं, यदि एक सकारात्मक सोच वाला मित्र हो जिसके कंधे पर सिर रखकर रोया जा सके। अपना दर्द अश्रुओं में बहाया जा सके। मित्र के सांत्वना के स्वर, सहयोग और सलाह ऐसे समय में अति महत्वपूर्ण होता है। आत्महत्या करने वाला युवक इतना निराश होता है कि उसे कोई सहारा दिखाई नहीं देता। वह उस एक हताशा के भावुक क्षण में यह निर्णय लेता है। यदि यह क्षण निकल जाए तो वही युवा कल का आदर्श युवा बनकर उभर सकता है। ऐसे समय में मित्र एक औषधि के रूप ही होते हैं। धर्नुधारी अर्जुन के सखा जब गुरु बनकर उभरते हैं तो अर्जुन की समस्या हल हो जाती है।

संकट सब पर आते हैं। ऐसे समय में मन अनेक नाच नचाता है। मन के रोगग्रस्त होते ही भला चंगा शरीर भी हताश हो जाता है। संस्कृत कवि भारवि कहते हैं, ''मन के दु:खी होने पर सब कुछ असाध्य हो जाता है।'' और मन की निरोगता ही सच्ची निरोगता है। कहते भी है मन चंगा तो कठौती में गंगा।

ये दु:खद क्षण जीवन में प्रत्येक व्यक्ति को कभी न कभी अवश्य आते हैं। रामायण में सीताहरण की कथा ऐसी ही स्थिति का वर्णन करती है। भगवान राम जब अंगद और हनुमान से मिलते हैं तो मित्रता की भूमिका बनती है। बाल्मिकी रामायण में अंगद को मित्र के रूप में ही स्वीकार किया गया है। विचार कीजिए रामायण में अंगद और हनुमान न हो तो कथा का क्या रूप हो। अत: प्रत्येक व्यक्ति को दो चार वास्तविक मित्रों का चयन कर उन पर विश्वास करना ही चाहिए।

अपने मित्रों के चयन में पुस्तकों पर भी ध्यान दीजिए। विश्व में पुस्तकें हमारी सबसे अच्छी मित्र हो सकती है। वे कभी धोखा नहीं देती। वे हर समस्या के हल करने के लिए अनुभव रूपी पुष्प सजाएं सदा तत्पर रहती है। पुस्तकें पुस्तकालय से भी चयन की जा सकती है और अच्छी पुस्तकें तो बिस्तर के सिरहाने हमेशा रखी रहनी ही चाहिए। पुस्तकें हमसे विवाद नहीं करती, किन्तु बात हमेशा करती है।

अपनी पत्नी को भी मित्र के रूप में देखिए। वह गंभीर क्षणों में आपकी मार्गदर्शिका हो सकती है। आपके सुख-दुख उसके भी सुख-दुख है। वह आपके हताशा के क्षणों में मित्र के रूप में सहायक हो सकती है।

महाभारत में व्यक्ति के गुण, विद्या, शूरवीरता, दक्षता, बल और धैर्य को स्वाभाविक मित्र कहा गया है। यदि संकट के समय ये गुण हो तो फिर हताश होने का कारण ही नहीं है।

मानसिक तनाव, डिप्रेशन आदि में मित्र की भूमिका बड़ी अहम हो जाती है। सच्ची मित्रता को बनाए रखना बड़ा दायित्व का कार्य है। पादरी एवं खिलाड़ी चार्ल्स केवल कॉल्टन ने कहा है, ''सच्ची मित्रता उत्तम स्वास्थ्य के समान है, उसका महत्व तभी ज्ञात होता है, जब हम उसे खो बैठते हैं।'' इसलिए जीवन में गिने-चुने मित्र बनाइए और आनंद लीजिए।

**-2, एम.आई.जी.,**
**देवरादेव नारायण नगर**
**रतलाम-457001 (म.प्र.)**

# श्रीकृष्ण पूरे ही परमात्मा हैं

पीठाधीश्वर बैजनाथजी

श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व बहुत अनूठा है। अनूठा इसलिए कि श्रीकृष्ण हुए तो अतीत में, लेकिन हैं भविष्य के। वे अकेले ही ऐसे व्यक्ति हैं जो धर्म की परम गहराइयों और ऊंचाइयों पर होकर भी गंभीर नहीं है। उदास नहीं है, रोते हुए नहीं हैं। संतजी का लक्षण है- जितना ज्यादा उदास एवं गंभीर चेहरा होगा, उतने ही बड़े बाबाजी माने जायेंगे। कृष्ण अकेले ही ऐसे नृत्य करते हुए व्यक्ति हैं। हंसते हुए, गीत गाते हुए। नित्य नवीन और एक हंसते हुए फूल के समान। जीसस के संबंध में कहते हैं- वह कभी हंसा नहीं। उनका यह उदास व्यक्तित्व एवं सूली पर लटका हुआ शरीर ही हम दु:खी चित्त वालों के लिए आकर्षण का कारण बन गया। महावीर या बुद्ध को भी कभी हंसने का अवसर ही नहीं मिला। हमारे राम तो कभी हंसते ही नहीं। ज्यादा से ज्यादा कभी कभार मुस्कुरा लेते हैं। पर श्रीकृष्ण खिल-खिलाकर हंसते हैं, अवसाद के क्षणों में और तूफान के क्षणों में।

समस्त धर्मों ने जीवन के दो हिस्से कर रखे हैं- एक वह जो स्वीकार योग्य है और एक वह जो अस्वीकार्य है। श्रीकृष्ण ही एक ऐसा व्यक्तित्व है जो इस समग्र जीवन को पूरा स्वीकार कर लेते हैं। जीवन की समग्रता की स्वीकृति उनके व्यक्तित्व में फलित हुई है इसलिए इस देश ने कृष्णस्तु के अलावा सभी अवतारों को अंशावतार कहा है पर कृष्ण को पूर्णावतार कहा है। राम भी अंश ही हैं परमात्मा के, लेकिन श्रीकृष्ण पूरे ही परमात्मा हैं 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्।' श्रीकृष्ण ने पूरे जीवन को आत्मसात कर लिया है। वे दु:ख के इस महासागर के बीच थिरकते हुए एक छोटे से द्वीप हैं।

मनुष्य द्वंद्व में जीता रहा है। शरीर को इंकार करना है, आत्मा को स्वीकार करना है या फिर शरीर को स्वीकार करना है आत्मा को इंकार करना है। परलोक को स्वीकार करना है, इहलोक को इंकार करना है। स्वभावत: यदि हम शरीर को इंकार करेंगे तो जीवन उदास हो जाएगा। क्योंकि जीवन के सारे रस स्रोत, जीवन का सारा संगीत और सारी संवेदनाएं शरीर से आ रही हैं। शरीर को जो धर्म अस्वीकार कर देगा, वह पीत वर्ण हो जाएगा, रक्त शून्य हो जाएगा। वह सूखे पत्ते की तरह सूखा हुआ धर्म होगा। इसी तरह यदि आत्मा को अस्वीकार कर देंगे तो जीवन का प्रकाश ही बुझ जाएगा।

श्रीकृष्ण अकेले हैं जो शरीर एवं आत्मा को उनकी संपूर्णता में स्वीकार करते हैं। श्रीकृष्ण न दमनवादी हैं न सुधारवादी। वे तो सहज हैं, स्वाभाविक हैं। न वे किसी चीज को ग्रहण कर रहे हैं और न किसी चीज को त्याग रहे हैं। वे कर्म करते हुए भी अकाम हैं। वे फल भोगते हुए भी निष्काम हैं। वे प्रेम से भागते नहीं। पर वे प्रेम पाश के बंदी भी नहीं हैं। वे गोपिकाओं के साथ रास एवं महारास रचाकर प्रेम का पूर्ण आस्वादन भी करते हैं पर वे रोती-बिलखती गोपिकाओं को छोड़कर मथुरा भी जा पहुंचते हैं। उनको कोई बांध नहीं सकता। वे अपने प्यारे मित्रों के हाथ हार खा लेते हैं। पर कंस जैसे दुर्धर्ष दुष्टों को हराने के लिए भी तत्पर हैं। वे करुणा और प्रेम से भरे होते हुए भी युद्ध करने की सामर्थ्य रखते हैं। उनका चित्त पूर्णतया अहिंसक है, फिर भी हिंसा के ठेठ दावानल में उतर जाते हैं। उन्हें अमृत भी स्वीकार है, जहर भी स्वीकार है। श्रीकृष्ण द्वंद्व को एक साथ स्वीकार कर लेते हैं और इसीलिए द्वंद्वातीत हो जाते हैं।

**श्रीकृष्ण अकेले हैं जो शरीर एवं आत्मा को उनकी संपूर्णता में स्वीकार करते हैं। श्रीकृष्ण न दमनवादी हैं न सुधारवादी। वे तो सहज हैं, स्वाभाविक हैं। न वे किसी चीज को ग्रहण कर रहे हैं और न किसी चीज को त्याग रहे हैं। वे कर्म करते हुए भी अकाम हैं। वे फल भोगते हुए भी निष्काम हैं। वे प्रेम से भागते नहीं। पर वे प्रेम पाश के बंदी भी नहीं हैं।**

राम के जीवन को हम चरित्र कहते हैं। राम बड़े गंभीर है। उनका जीवन लीला नहीं है, चरित्र है। वे शील, सदाचार व संयम के प्रति पूर्ण जागरूक हैं। रघुकुल रीति सदा चलि आई... के कायल हैं। विभीषण को लंकेश कहते ही अपने शब्दों के प्रति सजग हो जाते हैं। राम ने मर्यादाओं की सीमा छू दी है- पुत्र के रूप में, पति के रूप में, स्वामी के रूप में, भाई के रूप में, राजा के रूप में, सभी संबंधों की मर्यादाओं की चरम सीमा है राम के जीवन में। पर कृष्ण का जीवन चरित्र नहीं है मात्र लीला है। राम मर्यादाओं में बंधे हुए व्यक्ति हैं, मर्यादाओं के बाहर वे एक कदम भी नहीं बढ़ेंगे। मर्यादा पर वे सब कुछ कुर्बान कर देंगे। श्रीकृष्ण के जीवन में मर्यादा जैसी कोई चीज नहीं है। पूर्ण अमर्यादित, पूर्ण स्वतंत्र, जिसकी कोई सीमा नहीं, जो कहीं भी जा सकता है। वे शिखंडी को आगे कर निहत्थे भीषम पितामह को मरवा देते हैं। निश्शस्त्र कर्ण का वध करवा डालते हैं। धर्मराज से झूठ बुलवाकर द्रोणाचार्य को दुनियां से विदा कर देते हैं। वे द्रौपदी का चीर बढ़ाकर अपनी विलक्षण योग शक्ति का परिचय देते हैं तो द्रौपदी को कंधे पर बैठाकर भीष्म पितामह से अभय दान भी लिवा लाते हैं। वे बचपन में माखन चोरी भी करते हैं, गोपिकाओं का चीर हरण भी कर बैठते हैं पर साथ ही महारस में गोपिकाओं को पूर्ण मुक्ति एवं पूर्ण प्रेम का स्वाद चखा देते हैं।

श्रीकृष्ण ने एक साथ समग्र रूप से राग, प्रेम, भोग, काम, योग व ध्यान की समस्त दिशाओं को स्वीकार कर लिया है।

श्रीकृष्ण को समझाने के लिए यह समझना जरूरी है शरीर एवं आत्मा जैसी दो चीज नहीं है। आत्मा का दृष्टव्य रूप शरीर है, शरीर का अदृष्ट रूप आत्मा है। ऐसे ही परमात्मा और संसार दो चीज नहीं है। परमात्मा और प्रकृति जैसा कोई द्वंद्व नहीं है। परमात्मा का जो हिस्सा दृश्य हो गया है वह प्रकृति है और जो अब भी अदृश्य है, वह परमात्मा है। कहीं भी ऐसी कोई जगह नहीं है जहां प्रकृति खत्म होती है और परमात्मा शुरू होता है। बस प्रकृति लीन होते-होते परमात्मा बन जाती है। परमात्मा ही प्रकट होते-होते प्रकृति बन जाता है। अद्वैत का यही अर्थ है। इस अद्वैत का साकार प्रमाण श्रीकृष्ण हैं। मनुष्य के मन ने सदैव चाहा कि वह चुनाव कर ले। उसने चाहा कि स्वर्ग को बचा ले और नरक को छोड़ दे। उसने चाहा कि शांति को बचा ले, तनाव को छोड़ दे। उसने चाहा शुभ को बचा ले, अशुभ को छोड़ दे। उसने चाहा प्रकाश ही रहे, अंधकार न रह जाए। मनुष्य के मन ने अस्तित्व को दो हिस्सों में तोड़कर एक हिस्से का चुनाव किया और दूसरे को अस्वीकार किया। इससे द्वंद्व पैदा हुआ, इससे द्वैत पैदा हुआ श्रीकृष्ण दोनों को एक साथ स्वीकार करने के प्रतीक हैं। और जो दोनों को एक साथ स्वीकार करता है, वही पूर्ण हो सकता है। जितने को चुनेगा उतना हिस्सा रह जाएगा और किसको अस्वीकार करेगा, सदा उससे बंधा रहेगा। उससे बाहर नहीं जा सकता। अत: श्रीकृष्ण द्वंद्वातीत हैं। ●

# सद्विचार में है समस्या का समाधान

ताराचंद आहूजा

**महापुरुषों का कथन है कि वर्तमान जीवन में जो दु:ख–सुख हमें मिलते हैं, वे हमारे इसी जीवन के कर्मों के फल हों, यह आवश्यक नहीं है। न जाने किस पूर्वजन्म के दुष्कर्मों–कुकर्मों के फल हमें जीवन में भोगने पड़ते हैं, इसे फलदाता ईश्वर के सिवाए कोई दूसरा नहीं जानता।**

मनुष्य एक विचारशील प्राणी है। भगवान ने उसे बुद्धि दी है। अत: विचार और चिंतन उसका नैसर्गिक स्वभाव है। आज के अर्थप्रधान युग में भौतिक पदार्थों एवं पद-प्रतिष्ठा की कामना में उसकी विचारशीलता को इस कदर बढ़ा दिया है कि यह अनेक प्रकार की समस्याओं से घिर गया है। बड़ों की उपेक्षा करने की प्रवृत्ति के बढ़ने और नैतिक मूल्यों में निरन्तर ह्रास की प्रवृत्ति ने भी इस विषय में आग में घी का काम किया है। एक सर्वेक्षण के अनुसार आज लगभग 98 प्रतिशत लोग मानसिक रोगों से ग्रस्त हैं। छोटी-छोटी बातों को लेकर मनुष्य दिन-रात चिंता करने लगा है। कालान्तर में यही चिंताएं उसे मानसिक एवं शारीरिक रूप से रोगग्रस्त बना देती हैं। यही कारण है कि मधुमेह, हृदयाघात, उच्च रक्तचाप, पक्षाघात आदि कई तनावजनित बीमारियां आम हो गई हैं। चिकित्सा विज्ञान में अभूतपूर्व प्रगति होने के बावजूद हम पहले से अधिक रोगग्रस्त होते जा रहे हैं। विभिन्न प्रकार की अनर्गल समस्याओं से जूझना हमारी नियति बन गई है।

मानस रोगों के बारे में गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं- 'मोह सकल ब्याधिन कर मूला, तिनते पुन: उपजहिं बहुसूला।' मानसिक रोगों का प्रमुख कारण हमारे मन की अशांति हैं। हमारा मन इसलिए अशांत रहता है कि हमारे जीवन में सब कुछ हमारे मन के अनुकूल नहीं हो रहा है अथवा हमारे मन के प्रतिकूल कोई ऐसी परस्थिति निर्मित हो गई है जिसे हम हटाना चाहते हैं परन्तु वह हटती नहीं है। हम दिन-रात उसी चिन्ता में घुले जा रहे हैं। हम धर्मशास्त्रों और महापुरुषों की इस बात पर तनिक विचार नहीं करते कि ईश्वर जो कुछ करते हैं, हमारे मंगल और कल्याण के लिए ही करते हैं और जो कुछ होता है वह भी प्रभु की इच्छा, प्रेरणा और शक्ति से ही होता है। हमें समझना चाहिए कि अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थिति सब हमारे प्रियतम प्रभु की भेजी हुई ही आती है, उनकी इच्छा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। किसी महापुरुष ने कहा भी है-

**तेरी सत्ता के बिना, हे प्रभु मंगल फूल।**
**पत्ता तक हिले नहीं, खिले न कोई फूल॥**

वस्तुत: भगवान तो कुछ भी नहीं करते, हमारे पूर्व में किए हुए अच्छे व बुरे कर्म ही अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थिति के रूप में हमारे समक्ष प्रकट होते हैं और हमारे लिए सुख-दुख का कारण बनते हैं। भगवान तो हमारे आने वाले पूर्वकृत शुभ-अशुभ कर्मों का फल भुगतने में निमित्त मात्र बनते हैं और वह भी इसलिए कि हम कर्मों का फल भुगतकर ऋणमुक्त हो जाएं, निर्मल हो जाएं और हमारा हृदय प्रभु के विराजने योग्य बन जाए। संत-मनीषियों का कथन है कि जब तक हमारा मन निर्मल नहीं होगा तब तक हम परमात्मा की प्राप्ति के पात्र नहीं बन सकते। संतमत मन को निर्मल बनाने पर जोर देता है। संत बुल्लेशाह कहते हैं-

**दिल का हुजरा साफ कर, जानां के आने के लिए।**
**ध्यान गैरों का उठा, उसको बिठाने के लिए॥**

महापुरुषों का कथन है कि वर्तमान जीवन में जो दु:ख-सुख हमें मिलते हैं, वे हमारे इसी जीवन के कर्मों के फल हों, यह आवश्यक नहीं है। न जाने किस पूर्वजन्म के दुष्कर्मों-कुकर्मों के फल हमें जीवन में भोगने पड़ते हैं, इसे फलदाता ईश्वर के सिवाए कोई दूसरा नहीं जानता। इस उधेड़बुन से कोई लाभ नहीं है कि कौन से कर्म का फल हमें इस जीवन में भोगना पड़ रहा है। बस, हमें तो इतना विश्वास रखना चाहिए कि कारण के बिना कार्य नहीं होता। अत: इस जीवन में जो कुछ भी सुख-दुख हम भोग चुके हैं, भोग रहे हैं तथा आगे भोगेंगे, वे सब हमारे ही कर्मों के फल हैं इसमें कोई संदेह नहीं। यह सद्विचार की बात है जिससे हमारी समसस्या का समाधान हो जाता है। अपने स्वजनों की आकस्मिक मृत्यु, व्यापार में हानि, अपयश की प्राप्ति आदि शोकप्रद व प्रतिकूल घटनाओं से भी हमें यही सीखना चाहिए कि शेष जीवन में हम दुष्कर्मों से बचें रहें और सत्कर्मों में ही अपना जीवन लगाएं। भगवतस्मरण तथा भगवद्बुद्धि से प्राणिमात्र की निष्काम सेवा से बढ़कर कोई शुभ कर्म नहीं है।

समस्त सृष्टि और संपदा के स्वामी ईश्वर ही हैं, 'वासुदेव सर्वम।' वे अपनी किसी भी वस्तु को जहां भी रखना चाहें और जब तक रखना चाहें, रख सकते हैं। वे हमारे कर्मों का जैसा भी और भी फल देना चाहें, दे सकते हैं। अपनी झांकी दिखाना भी उन्हीं के हाथ की बात है, वे जब उचित समझेंगे, तब दिखायेंगे। उनके इस विधान में हस्तक्षेप करने का हमारा अधिकार नहीं है। हमारा कर्तव्य इतना ही है कि हम उसकी रजा में राजी रहें, उसके विधान का सम्मान करें और विश्वास रखें कि वे हमारी सुहृदय हैं और हमारा मंगल ही करेंगे। यह सद्विचार हमारी समस्त समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर देगा। कठिनाइयां सबके जीवन में आती हैं। ईश्वर हमें उन कठिनाइयों को सहन करने की शक्ति दे, यह प्रार्थना करनी चाहिए। हमारी ऐसी कोई समस्या नहीं है जो ईश्वर की कृपा से हल न हो सके।

**–4/114, एस.एफ.एस., अग्रवाल फार्म मानसरोवर, जयपुर-302020**

लीला कृपलानी

# भौतिकता और आध्यात्मिकता का समन्वय

आध्यात्मिकता से प्राप्त ज्ञान हमें जीवन की यथार्थता से जोड़ता है जिससे जीवन संपूर्ण बनता है। यह मन की वह अवस्था है जहां न राग है न द्वेष है, न दुख है न सुख है, न तेरा न मेरा बस आनंद ही आनंद है। अध्यात्म शब्द को हम एक सीमित परिभाषा में नहीं बांध सकते। हमारे अंत:करण में जब किसी शक्ति के प्रति श्रद्धा व विश्वास के भाव आने लगे तो समझो अध्यात्म का उदय हो रहा है। आध्यात्मिक पथ पर चलने वाले व्यक्ति की बॉडी लैंग्वेज ही उसके अध्यात्म ज्ञान का परिचय देती है। उसके विचारों और भावनाओं में पवित्रता व दिव्यता आती है। जो आंतरिक सौंदर्य बढ़ाता है। तप स्वाध्याय और शक्ति के समुच्च से उत्पन्न भाव संवेदना सौंदर्य बढ़ाता है। तप स्वाध्याय और शक्ति के समुच्चय से उत्पन्न भाव संवेदना ही अध्यात्म है। परन्तु इसके लिए श्रद्धा, विश्वास और समयदान की आवश्यकता होगी तब चित्त की निर्मलता और पवित्रता अध्यात्म की सीढ़ी दर सीढ़ी बनेगी। व्यवहार में नैतिकता झलकेगी और तब जीवन में शनै:-शनै: बदलाव आयेगा।

कवि रविन्द्रनाथ टैगोर लिखते हैं, ''मानवीय अंतराल में अंर्तनिहित आस्था एक ऐसी चिड़िया के समान है जो उषाकाल की प्रतीक्षा में संगीतमय ध्वनियों से समूचे वातावरण को गुंजायमान करती और मधुरता उत्पन्न करती है। यदि इसकी स्वर लहरियों को ध्यानपूर्वक सुना व समझा जा सके तो जीवन में जो समरसता और सक्रियता आयेगी वह अध्यात्म है।''

अध्यात्म में बस यूं समझ लीजिए कि ज्ञानरूपी हलकों विनयरूपी हत्थे से पकड़कर और हल को विचारशीलता की धार द्वारा जुताई करके श्रद्धा के बीज बोकर उसमें तपस्या के जल से सिंचाई करके और मन रूपी खुरपी से निराई-गुड़ाई करके आत्मा की खेती की जाती है। दूसरी ओर आधुनिकता का अर्थ है केवल अंधानुकरण। न सोचना न समझना बस ये होना चाहिए। येन-केन प्रकारेण में वह सब कुछ पा लूं, जो मैं पाना चाहता हूं। आधुनिकता तो ईश्वर अथवा गुरु के अस्तित्व को तो स्वीकार ही नहीं करती। भौतिकवाद ईश्वरीय सत्ता नहीं ऐश्वर्यसत्ता को स्वीकारता है। आधुनिकता के अंधानुकरण ने मनुष्य को धन संपन्न तो बना दिया पर जीवन को मर्यादाहीन कर दिया।

आधुनिकता की चकाचौंध व्यक्ति को जीवन में महात्वकांक्षाओं की अट्टालिकाओं पर तो बैठा देती है परन्तु परिणाम यह होता है कि कुंठाओं की अंधेरी गुफाओं में बैठकर चिंता और सोच करना पड़ जाता है। यद्यपि यह सत्य है कि आधुनिकता जीवन में खुलापन तो देती है परन्तु सरलता नहीं। खुलापन और सरलता दोनों अपनी-अपनी जगह हैं। लेकिन हमेशा ही खुली किताब बनना घातक है। कुछ बातों को अपने तक ही सीमित रखना हितकर होता है। क्योंकि खुद को खुद ही जानने से आत्मविश्वास बढ़ता है और आत्मविश्वास से आत्मशक्ति बढ़ती है जो जीवन को चिंतामुक्त बनाती है।

अध्यात्म में तीन बातों पर विशेष बल दिया जाता है रहनी, सहनी और करनी। रहनी में हमारी कमाई ईमानदारी की हो। सहनी से मतलब है हम हर परिस्थिति में सहनशक्ति बनाये रखें और करनी से अर्थ है कि हमारा व्यवहार मधुर व नीतिगत हो। इन तीनों की बिलौनी ही अध्यात्म है। जबकि आधुनिकता के फेर में मनुष्य सही गलत पहचान ही नहीं पाता उसकी सहनशक्ति जीरो हो जाती है इसका कारण है अनावश्यक स्ट्रेस फिर ऐसे में भला सद्व्यवहार की अपेक्षा कैसे की जा सकती है। व्यवहार में प्रेम, निरअहंकारिता, नम्रता, दया और करुणा हो। 'सियाराम मय सब जग जानी' का भाव हो तभी जीवन सार्थक मानो।

आधुनिकता में भोग की अधिकता पायी जाती है जो सिवाय परेशानियां पैदा करने के अलावा कुछ नहीं देती। जबकि अध्यात्म जीवन में समरसता उत्पन्न करता है। महात्मा बुद्ध ने कहा था- ''जो सितार के तार का नियम है वही जीवन की तपश्चर्या का भी नियम है। मध्य में रहो, न भोग का अति करो न तप की। तभी जीवन रूपी सितार के तार का आनंद उठाया जा सकता है।''

जब हम आधुनिकता और आध्यात्मिकता में सामंजस्य बैठाकर चलेंगे तो धीरे-धीरे हमारे पांव जमीन की सच्चाइयों और इसके उतार-चढ़ाव के अनुसार चलने के लिए तैयार होने लगेंगे। अध्यात्म सत्य में प्रतिष्ठित करता है और सत्य से पूरित वाणी जो कुछ भी कहती है वह होकर रहता है जबकि भौतिकता में झूठ दिखावा और फरेब है। कहते हैं न कि झूठ के पांव नहीं होते। सकारात्मक सोच के द्वारा भी आधुनिकता की अंधी दौड़ पर अंकुश लगाया जा सकता है।

भौतिकता आज के जगत की देन है और जगत का अर्थ है जागता हुआ ईश्वर। उस ईश्वर को ढूंढने के लिए कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है बस उसे जानना है। उसे जानने के बाद भौतिकता हावी नहीं हो सकती। भौतिकता ने इतने आत्मिक दुख पैदा कर दिये हैं जो हमें शांति से बैठने नहीं देते। हमारे चित्त की मलिनता की कालिमा ने हमारे सद्चिंतन को ढक रखा है।

हे मानव! तुम कब सभ्य बनोगे। तुम उस राह को कब पहचानोगे जिस पर चलकर तुम्हें तुम्हारे ही विश्व का, इस पृथ्वी का और स्वयं अपना तुम्हें कल्याण करना है। चल पड़ो उस दिव्यता के पथ पर जहां से मनुष्य के उत्थान के मार्ग का शुभारंभ होने ही वाला है। सुनो उस प्रतिध्वनि को जो युगों की परतें हटाकर आमुख तुमसे कुछ कहती है।

मनुष्य तो आधुनिकता की तीव्र रोशनी में इस दिव्य पथ की दिशा ही भूल गया है। पर आधुनिकता को हम केवल उस निश्चित सीमा तक अपनाये जहां तक मानवीय मूल्यों का हनन न हो और आध्यात्मिकता हमारे साथ-साथ चलती रहे। तब जब हम सूर्य की पहली किरण के साथ अपने नेत्र खोलेंगे तो हमारे आंगन में झरते हुए हरसिंगार और मोगरे की महक हमारे पूरे दिन को तो क्या पूरे जीवन को जूही की तरह खूबसूरत बना देगी और जीवन इतना निर्मल बन जायेगा कि गंगा स्नान की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। जब ईश्वर का स्मरण होगा, चरित्र में शुचिता होगी और घर में और मन में शांति होगी तभी परिवार, समाज व राष्ट्र में शांति और समृद्धि के रास्ते खुलेंगे।

**-बी-50, नरसिंह विहार**
**लालसागर, जोधपुर-342026 (राज.)**

बरुण कुमार सिंह

# रक्षाबंधन
# विश्वास की रक्षा का पर्व

भारतीय परम्परा में विश्वास का बंधन ही मूल है। रक्षाबंधन इसी विश्वास का बंधन है। यह पर्व मात्र रक्षा-सूत्र के रूप में राखी बांधकर रक्षा का वचन ही नहीं देता, वरन प्रेम, समर्पण, निष्ठा व संकल्प के जरिए हृदयों को बांधने का भी वचन देता है। पहले आपत्ति आने पर अपनी रक्षा के लिए अथवा किसी की आयु और आरोग्य की वृद्धि के लिए किसी को भी रक्षा-सूत्र (राखी) बांधा या भेजा जाता था। सूत्र अविच्छिन्नता का प्रतीक है, क्योंकि सूत्र बिखरे हुए मोतियों को अपने में पिरोकर एक माला के रूप में एकाकार बनाता है। माला के सूत्र की तरह रक्षा-सूत्र भी व्यक्ति से, समाज से और अपने कर्तव्यों से जोड़ता है।

रक्षाबंधन पर्व पर जहां बहनों को भाइयों की कलाई में रक्षा का धागा बांधने का बेसब्री से इंतजार है, वहीं दूर-दराज बसे भाइयों को भी इस बात का इंतजार है कि उनकी बहना उन्हें राखी भेजे। उन भाइयों को निराश होने की जरूरत नहीं है, जिनकी अपनी सगी बहन नहीं है क्योंकि मुंहबोली बहनों से राखी बंधवाने की परम्परा भी काफी पुरानी है।

असल में रक्षाबंधन की परम्परा ही उन बहनों ने डाली थी जो सगी नहीं थीं। भले ही उन बहनों ने अपने संरक्षण के लिए ही इस पर्व की शुरुआत क्यों न की हो लेकिन उसी बदौलत आज भी इस त्योहार की मान्यता बरकरार है। इतिहास के पन्नों को देखें तो इस त्योहार की शुरुआत की उत्पत्ति लगभग छह हजार साल पहले बतायी गई है। कई साक्ष्य भी इतिहास के पन्नों में दर्ज हैं। रक्षाबंधन का इतिहास सिंधु घाटी की सभ्यता से जुड़ा हुआ है। वह भी तब जब आर्य समाज में सभ्यता की रचना की शुरुआत मात्र हुई थी। रक्षाबंधन के त्योहार के साथ कुछ ऐतिहासिक प्रसंग भी जुड़े हैं। मध्यकालीन युग में राजपूत व मुस्लिमों के बीच संघर्ष चल रहा था। रानी कर्णावती चित्तौड़ के राजा की विधवा थी। उस दौरान गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह से अपनी और अपनी प्रजा की सुरक्षा का कोई रास्ता न निकलता देख रानी ने हुमायूं को राखी भेजी थी। तब हुमायूं ने उनकी रक्षा कर उन्हें बहन का दर्जा दिया था।

इतिहास का एक अन्य उदाहरण श्रीकृष्ण व द्रौपदी को माना जाता है। श्रीकृष्ण भगवान ने दुष्ट राजा शिशुपाल को मारा था। युद्ध के दौरान श्रीकृष्ण के बायें हाथ की अंगुली से खून बह रहा था। इसे देखकर द्रौपदी बेहद दुखी हुई और उन्होंने अपनी साड़ी का टुकड़ा चीरकर श्रीकृष्ण की अंगुली में बांधा जिससे खून बहना बंद हो गया। तभी श्रीकृष्ण ने द्रौपदी को अपनी बहन स्वीकार कर लिया था। वर्षों बाद जब पांडव द्रौपदी को जुए में हार गए थे और भरी सभा में उनका चीरहरण हो रहा था तब श्रीकृष्ण ने द्रौपदी की लाज बचाई थी।

रक्षाबंधन भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख पर्व है। उत्तर भारत में आमतौर पर इसे भाई-बहन के स्नेह व उनके आपसी कर्तव्यों के लिए जाना जाता है। भाई द्वारा बहन की रक्षा और इसके लिए बहन द्वारा भाई की कलाई पर रक्षा-सूत्र या राखी बांधने का रिवाज ही रक्षाबंधन पर्व कहा जाता है। किन्तु यह प्राचीन भारतीय संस्कृति में देश और राष्ट्र की रक्षा, जीवों की रक्षा, समाज व परिवार की रक्षा और भाषा व संस्कृति की रक्षा से भी जुड़ा हुआ है। वर्तमान में रक्षाबंधन के संकल्प को पर्यावरण की रक्षा के साथ भी जोड़कर देखा जा रहा है। कई लोग वृक्षों को राखी बांधकर पर्यावरण के प्रति जागरूकता ला रहे हैं।

रक्षा का संकल्प व्यक्ति के भीतर आत्मविश्वास लाता है। रक्षा करने का भाव ही व्यक्ति को ऊर्जस्वित बना देता है और वह इस ऊर्जा के वशीभूत बड़े से बड़े काम कर जाता है। रक्षा का संकल्प लेने वाला व्यक्ति भले ही शारीरिक रूपरेखा में कमजोर हो, लेकिन वह अंतस की ऊर्जा से ओतप्रोत हो जाता है।

श्रावण मास की पूर्णिमा को मनाए जाने वाले रक्षाबंधन से संबंधित अनेक कहानियां हैं, जो रक्षा करने के भाव से जुड़ी हुई हैं। जैन धर्म में यह पर्व साधना में लीन सात सौ मुनिराजों की रक्षा के साथ जुड़ा है। इसकी कथा भी वामन अवतार की तरह ही है। इसमें मुनिराज विष्णु कुमार वामन का रूप धारण कर राजा बलि से मुनियों की रक्षा करते हैं। इस कथा के अनुसार, अकंपनाचार्य का सात सौ मुनियों का संघ विहार करते हुए हस्तिनापुर पहुंचा। जिस स्थान पर मुनि साधना कर रहे थे, उसके चारों तरफ रजा बलि ने आग लगवा दी। धुएं से मुनियों के गला अवरुद्ध हो गए, आंखें सूज गई और तेज गर्मी से उन्हें कष्ट होने लगा, लेकिन मुनियों ने धैर्य नहीं छोड़ा। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक यह कष्ट दूर नहीं होगा, तब तक अन्न-जल का त्याग करेंगे। वह श्रावण शुक्ल पूर्णिमा का ही दिन था। उस दिन मुनियों के संकट दूर करने के लिए मुनिराज विष्णुकुमार ने वामन का भेष धारा किया और बलि से भिक्षा में तीन पैर धरती मांगी। विष्णुकुमार ने अपने शरीर को बहुत अधिक बढ़ा लिया। उन्होंने अपना एक पैर सुमेरू पर्वत पर रखा तो दूसरा पैर मानुषोत्तर पर्वत पर और तीसरा पैर रखने की जगह ही न थी। सर्वत्र हाहाकार मच गया। बलि ने जब क्षमा याचना की, तब जाकर वे पूर्ववत हुए। इस तरह सात सौ मुनियों की रक्षा हुई।

एक अन्य पौराणिक कथा के अनुसार देवों और दानवों के युद्ध में जब देवता हारने लगे, तब वे देवराज इन्द्र के पास गए। देवताओं को भयभीत देखकर इंद्राणी ने उनके हाथों में रक्षासूत्र बांध दिया। इससे देवताओं का आत्मविश्वास बढ़ा और उन्होंने दानवों पर विजय प्राप्त की। महाभारतकाल में द्रौपदी द्वारा श्रीकृष्ण को तथा कुंती द्वारा अभिमन्यु को राखी बांधने के भी वृतांत मिलते हैं।

मुम्बई के कई समुद्री इलाकों में इसे नारियल-पूर्णिमा या कोकोनट-फुलमून के नाम से भी जाना जाता है।

**-ए-56/ए, प्रथम तल**
**लाजपत नगर-2, नई दिल्ली-110024**

# भारत का आदर्श परिवार

देवर्षि कलानाथ शास्त्री

अद्भुत महिमा है शिव परविार के मुखिया महादेव शंकर की इस देश में जिनकी पूजा उत्तर से दक्षिण तक, पूरब से पश्चिम तक अनेक रूपों में होती है। घर-घर में महाशिवरात्रि के दिन तो इसकी आराधना होती है, महिलाएं सौभाग्य और समृद्धि के लिए शिव पार्वती की पूजा चौथ को भी करती है। राजस्थान में ईसर-गणगौर के रूप में शिव-पार्वती की युगल सौभाग्य के देवता के रूप में पूजा जाता है, तीज और गणगौर त्योहार इन्हीं को समर्पित है।

शिव परिवार सदियों से भारतीय संस्कृति और परिवार प्रथा का प्रेरणास्रोत रहा है। इस परिवार के सभी सदस्य देवताओं की तरह पूजे जाते हैं। ऐसा बहुत कम परिवारों के साथ होता है। शिव परिवार के मुखिया स्वयं शिव नहीं है, देवी पार्वती हैं। उनके दोनों पुत्र कार्तिकेय और गणेश विश्व भर में पूजे जाते हैं। इनके अतिरिक्त इस परिवार में इन सबके वाहन भी शामिल हैं। महादेव का वाहन नंदी वृषभ तो उनके साथ हर मंदिर में रहता ही है। गौरी का वाहन सिंह आवश्यकता पड़ने पर उपस्थित रहता है। कार्तिकेय कुमार का वाहन मयूर और गणेश का वाहन मूषक (चूहा) सुविदित हैं। अब नगरीकरण के साथ ये नदारत होते जा रहे हैं वह बात अलग है।

गौरी जिस प्रकार सौभाग्य और समृद्धि की देवी है उसी प्रकार अन्नपूर्णा भी हैं। कार्तिकेय शौर्य, पराक्रम, यौवन और विजय के देवता है। दक्षिण भारत में तो स्कंद, मुरुग्न आदि अनेक नामों से घर-घर में पूजे जाते हैं। उत्तर भारत में भी संतानोत्पत्ति के छठे दिन बालक की दीर्घायु, स्वास्थ्य, पराक्रम और कुशलता के लिए इनका आह्वान और पूजन किया जाता है।

शिव परिवार के बड़े पुत्र कार्तिकेय हैं तो छोटे पुत्र हैं गणेश जो हम सबके सुपरिचित हैं। कुछ के मत में गणेश बड़े और कार्तिकेय छोटे भाई हैं। गजानन गणेश अपनी माता गौरी के प्रिय हैं। मोदक खाना पसंद करते हैं। जन-जन के पूज्य हैं, विघ्नविनाशक हैं। यह बात अलग है कि दोनों पुत्र बचपन में बहुत शरारती थे। दोनों देवता शस्त्रधारी हैं कार्तिकेय भी शक्ति आदि शस्त्र रखते हैं गणेश भी त्रिशूल आदि। दोनों की रुचियां अलग-अलग हैं। माता पार्वती दोनों को बड़ी कुशलता से पालन करती हैं, दोनों में सौमनस्य रखवाती है। शिव परिवार की विभिन्न रुचियों, व्यापक मांगों और विभिन्न परिस्थितियों में गृहस्वामिनी पार्वती जिस कुशलता से सामंजस्य बिठाती है उसका बड़ा नायाब वर्णन संस्कृत के कवियों ने किया है। शिव परिवार के पोषण में पार्वती की अद्भुत शक्ति का वर्णन करते हुए विनोद से कवि कहता है-

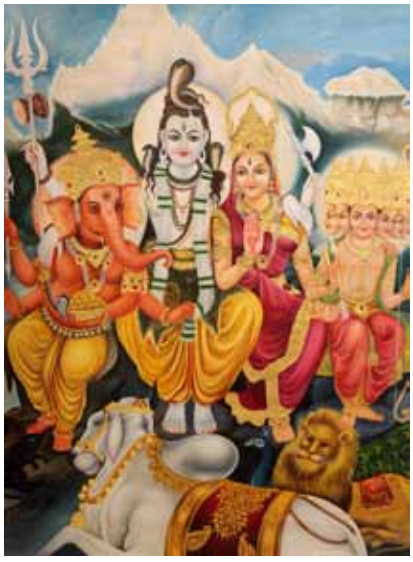

**शिव परिवार सदियों से भारतीय संस्कृति और परिवार प्रथा का प्रेरणास्रोत रहा है। इस परिवार के सभी सदस्य देवताओं की तरह पूजे जाते हैं। ऐसा बहुत कम परिवारों के साथ होता है। शिव परिवार के मुखिया स्वयं शिव नहीं है, देवी पार्वती हैं। उनके दोनों पुत्र कार्तिकेय और गणेश विश्व भर में पूजे जाते हैं। इनके अतिरिक्त इस परिवार में इन सबके वाहन भी शामिल हैं।**

**'स्वयं पंचमुख पुत्रै गजानन षडाननौ।**
**दिगम्बर कथं जीवेदन्नपूर्णा न चेद् गृहे।''**

देखो शिव परिवार के साझा चूल्हे में खाना रखने वालों का हाल। स्वयं महादेव पंचमुख हैं, उनके बड़े पुत्र षण्मुख है। पांच मुखों वाला गृहस्वामी कितना भोजन चाहता होगा इसकी कल्पना की जा सकती है। फिर बड़ा पुत्र छह मुखवाला है, उसके भोजन की मात्रा क्या कम होगी, छोटा पुत्र गजानन है। हाथी का खाना आप जानते ही हैं। इतने भोजन के लिए आय के स्रोत कितने चाहिए, आप समझ सकते हैं। किन्तु दिगम्बर शिवजी तो फक्कड़ हैं, स्वयं कुछ कमाते नहीं। फिर सारा घर, सारी रसोई कैसे चलती है? यह कमाल है अन्नपूर्णा पार्वती का जिसने सारा घर बांध रखा है। उसी की महिमा है कि पूरे परिवारजनों और परिवार के वाहनों (वृषभ, सिंह, मयूर और मूषक) के लिए भोजन की कभी कमी नहीं होती। तभी तो उन्हें अन्नपूर्णा कहा जाता है। तभी तो ऐसे कुशल मुखिया के प्रबंध कौशल से सारा परिवार भलीभांति चलता है।

शिव परिवार का प्रत्येक देव अलग-अलग शक्तियों और निधियों का स्वामी है। शंकर कल्याणकारी है, गौरी सौभाग्य की देवी हैं, कार्तिकेय पराक्रम के देवता हैं और गणेश बुद्धि के। यही सब तो वांछित होता है एक संसारी को अपनी जीवनयात्रा में। जीवन लीला की समाधि के बाद तक शिव परिवार हमारा उद्धार करता रहता है। भगवान शंकर अंतिम क्षण में तारक मंत्र फूंक कर प्राणी को सद्गति दिलाते हैं। श्मशान तक में उनका साथ नहीं छूटता। वे श्मशान वासी भी हैं, महाकाव्य भी, परम शिव भी तभी तो वे मृत्युंजय हैं। उनके मंत्र का जप मृत्यु पर विजय दिलवा देता है, मृत्यु को पास फटकने भी नहीं देता। ये महामृत्युंजय न जाने कितनी शताब्दियों से सारे देश को जीवनदान देते रहे हैं, मृत्यु के भय को परास्त कर अमरत्व का पीयूष पिलाते रहे हैं। सारा विष, सारा कलुष स्वयं पी लेते हैं, औरों को अमृत पिलाते रहे हैं। उधर गौरी दाम्पत्य सुख की अधिष्ठात्री देवी हैं। उनकी पूजा कर, उनके नाम का सिंदूर मांग में धारण कर सुहागिनें अखण्ड सौभाग्य का वर प्राप्त करती हैं। हमारी लोककथाओं में तो शिव पार्वती त्रिलोकी में सदा विचरण करते रहते हैं। जहां कोई दीन दुखिया या अभागिन दिखी, पार्वती उसकी विपत्ति समाप्त करने के लिए शिवजी से आग्रह करती हैं और सबका दुख दूर करवा कर ही मानती है।

इन्हीं सब अपूर्ण गुणों और करतबों के कारण विलक्षण महिमा का धनी है यह शिव परिवार। भारत के घर-घर में इसकी महिमा गायी जाती है, सभी भारतीय भाषाओं में इस परिवार के देवताओं की स्तुतियां लिखी गई हैं, काव्य लिखे गये हैं, गाथाएं गायी जाती हैं, कथाएं प्रचलित हैं। गांव-गांव, नगर-नगर में जो शिव मंदिर स्थापित हैं उनमें इस परिवार के दर्शन कर हम कृतार्थ होते रहते हैं। शिव, पार्वती, गणेश और नंदी बैल तो उत्तर भारत के मंदिरों में स्थापित देखे जा सकते हैं। कार्तिकेय भी जो दक्षिण भारत में मुरुगन हैं, घर-घर में, मंदिरों में पूजे जाते हैं, उत्तर में यह मानकर कि वे सैन्य अभियान में गए हैं हम उन्हें षष्ठी पूजन पर अवश्य बुलाते हैं। इस प्रकार भारत का यह आदर्श परिवार इस मूल्य का प्रतीक है कि परिवार के सदस्य अलग-अलग स्वभाव और शक्ति या रुचि अवश्य रखते हैं किन्तु उनका एकजुट रहना ही परिवार को सच्ची परिभाषा देता है।

**-सी/8, पृथ्वीराज रोड, सी-स्कीम**
**जयपुर (राजस्थान)**

# अपने नजरिए को बदलो

राजिन्दर सिंह महाराज

**हर आदमी की जिंदगी में ऊंच–नीच आती है। कोई ऐसा इंसान नहीं, जो इस जिंदगी में कोई दुख नहीं झेलेगा या जिसे कभी सुख नहीं मिलेगा। एक दोलक की तरह जिंदगी झूलती रहती है– खुशी और गम के लम्हों के बीच।**

हम सब यही चाहते हैं कि अपनी जिंदगी को अच्छे तरीके से जीयें। इस जिंदगी को सद्‌गणों से भरें, एक ऐसी जिंदगी जीयें, जिसमें औरों की जिंदगी भी कुछ बेहतर बना सकें। पर उम्र के साथ कुछ ऐसे वाकए हो जाते हैं जिनसे लगता है कि लोग हमारा फायदा उठा रहे हैं। या जो हमारा है, उसे लेने की कोशिश कर रहे हैं। तब हम अपना रुख बदलने लगते हैं। फिर औरों की मदद करने की बजाए हम इस ताक में रहते हैं कि हमारा फायदा कैसे हो।

हर आदमी की जिंदगी में ऊंच–नीच आती है। कोई ऐसा इंसान नहीं, जो इस जिंदगी में कोई दुख नहीं झेलेगा या जिसे कभी सुख नहीं मिलेगा। एक दोलक की तरह जिंदगी झूलती रहती है– खुशी और गम के लम्हों के बीच।

खुशी के मौके बहुत थोड़े लगते हैं और दुख के मौके बहुत ज्यादा लगते हैं। हम सोचते हैं कि हमारी कोई मदद नहीं करेगा। और फिर हम सिर्फ अपने लिए जीना शुरू कर देते हैं।

एक हरा–भरा वृक्ष था। उस पर फल और फूल बड़े अच्छे लगते थे। बहुत से परिन्दे उस पेड़ के ऊपर घोंसला बनाकर रहते थे। और वहीं खाते पीते थे। कई मुसाफिर उसकी छाया के नीचे आकर आराम किया करते थे। पेड़ के आस–पास हमेशा रौनक लगती रहती थी, तो वह पेड़ भी बड़ा खुश रहता था। उसे अपने महत्व का एहसास होता था कि मैं कितने प्राणियों की

मदद कर रहा हूं। उसे अपने बड़प्पन का एहसास होता था कि मेरा इस धरती पर खड़ा होना सार्थक हुआ क्योंकि परिन्दों को खाना मिलता है, मुसाफिरों को छाया मिलती है।

पेड़ की जिंदगी आनंद से गुजर रही थी। लेकिन वक्त सदा एक जैसा नहीं रहता। उम्र के साथ पेड़ में भी नए पत्ते और फल–फूल आने कम हो गए। जब ऐसा हुआ तो उस पेड़ पर परिन्दों ने भी आना बंद कर दिया। उन्हें लगा कि सारी शाखायें (टहनियां) तो सूख गयी हैं– कहीं हरियाली नहीं है। सब जगह सूखी–सूखी टहनियां ही दिखाई दे रही हैं। जब छाया नहीं रही तो मुसाफिरों ने भी वहां रुकना बंद कर दिया। पेड़ निराशा से भर उठा, मैं तो उम्र भर सबकी मदद करता रहा, लेकिन मेरे बुढ़ापे के समय मुझसे बात करने भी कोई नहीं आ रहा।

एक दिन वहां एक महात्मा आए और वहीं पेड़ के नीचे बैठे। अचानक लगा जैसे पानी के दो बूंदे उनके ऊपर आ गिरीं। ऊपर देखा तो लगा कि पेड़ रो रहा है। उन्होंने पेड़ से पूछा, भाई तुम रो क्यों रहे हो? पेड़ ने कहा, जब मैं तंदुरुस्त था, मेरे ऊपर बहुत हरे–हरे पत्ते और फल–फूल होते थे और मैं लोगों की बहुत मदद करता था। लेकिन अब मैं बूढ़ा हो गया हूं, मेरे ऊपर न पत्ते, न फूल, न फल। जल्द ही कुछ लोग मुझे काटने के लिए आ रहे हैं। इसलिए रोना आ रहा है कि जिंदगी भर मैं सबकी मदद करता रहा, लेकिन अब बुढ़ापे में कोई मेरे पास नहीं आ रहा। कल मेरी मृत्यु हो जाएगी।

पेड़ की व्यथा सुनकर महात्मा ने कहा, इसमें दुखी होने या डरने की क्या बात है? तुम अपने सोचने का तरीका बदल लो। तुम जिंदगी भर सबकी मदद करते आए हो। पेड़ ने कहा, हां! मैं जब छोटा–सा पौधा था तब से सब की मदद करता रहा हूं। जब बड़ा हो गया, तब भी सबकी मदद करता रहा।

तब महात्मा ने कहा, तुम यह समझो कि अब अपनी मृत्यु में भी तुम उनकी मदद ही करने जा रहे हो। जब वे तुम्हें काटेंगे तो तुम्हारी लकड़ी का भी तो कहीं पर इस्तेमाल होगा। वह भी तो किसी की भलाई के ही काम आएगी। यह नई बात सोचकर पेड़ का मन खुश हो गया। और जब वह खुश हो गया तो अचानक उसमें फिर से हरियाली आ गई। और तब उसे कोई काटने के लिए भी नहीं आया। ●

# बहादुरी का काम है प्रेम का प्रदर्शन करना

महात्मा गांधी

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का जन्म 2 अक्टूबर 1869 को पोरबन्दर में हुआ था। उनके जन्म दिन को देश में गांधी जयंती और दुनिया भर में इंटरनेशनल डे ऑफ नॉन वायलेंस के तौर पर मनाया जाता है। सविनय अवज्ञा, भारत छोड़ो और डांडी मार्च जैसे कई बड़े आंदोलनों की बदौलत सत्य और अहिंसा के इस पुजारी ने देश के आजादी दिलाई। 30 जनवरी 1948 को उनकी हत्या कर दी गई।

- दुनिया को सिखाने के लिए मेरे पास कुछ भी नया नहीं है। सत्य और अहिंसा बहुत पुरानी बातें हैं। मैंने तो बस इनके साथ प्रयोग किए हैं।
- प्रेम को जाहिर करना बहादुरों का काम है। यह कायरों का काम नहीं है।
- किसी देश की संस्कृति का पता उस देश के लोगों के दिलों और आत्मा से चलता है।
- ऐसा धर्म असल में धर्म है ही नहीं, जो रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़े व्यावहारिक मामलों पर दिशा नहीं दिखाता।
- दुनिया में जितने भी धर्म हैं, उनके सिद्धांतों में फर्क हो सकता है, लेकिन एक बात हर धर्म मानता है और वह यह है कि सत्य के अलावा दुनिया में सब कुछ नष्ट हो जाता है।
- हमेशा अपने विचारों के शुद्धिकरण पर ध्यान दो। फिर सब कुछ अच्छा होता चला जाएगा।
- आंख के बदले आंख वाला रवैया अपनाया गया, तो इसका नतीजा यह होगा कि पूरी दुनिया ही अंधी हो जाएगी।
- ईश्वर के दरबार में हमें हमारे कामों से नहीं जाना जाएगा, बल्कि इस बात से जाना जाएगा कि हमारी मंशा कैसी रही।
- आजादी किसी भी कीमत पर मिले, महंगी नहीं होती। जिंदगी के लिए यह सांस की तरह होती है।
- जो आप सोचते हैं, जो आप कहते हैं और जो आप करते हैं, जब इन तीनों में सामंजस्य हो, तो ही असली खुशी महसूस होती है।
- ईमानदार असहमति बेहतरी की सूचक है।

# सफलता के लिए तपस्या जरूरी

**रामकिशोर सिंह 'विरागी'**

सफलता के लिए सर्वप्रथम अपने जीवन से संबंधित उद्देश्य और लक्ष्य का निर्णय, निश्चय व निर्धारण अपेक्षित है। अर्थात् जीवन का उद्देश्य और लक्ष्य क्या है? उस उद्देश्य और लक्ष्य से संबंधित कार्य (काम) की प्रक्रिया में जाने से पूर्व है वह अपनी रुचि के अनुकूल और अनुसार है या नहीं? क्योंकि 'रुचि' प्रतिभा का परिचायक है। अगर अपनी रुचि के अनुसार लक्ष्य और कार्य है तो सफलता की अधिक और अच्छी संभावना है। क्योंकि जब रुचि है तो इस लक्ष्य एवं कार्य से संबंधित प्रतिभा भी है। परन्तु किसी लोभ, प्रलोभन एवं कार्य से संबंधित प्रतिभा भी है। परन्तु किसी लोभ, प्रलोभन या दबाव में आकर निर्णय लिया गया है तो उसमें रुचि के अभाव में आनंद नहीं मिल पाएगा। आनंद नहीं मिल पाएगा तो काम ठीक ढंग से नहीं हो पाएगा और संभव है कि सफलता नहीं मिलेगी। होता यह है कि किसी के द्वारा लोभ और प्रलोभन उत्पन्न किया जाता है कि इस काम में इतना अधिक लाभ होता है होगा तब इस लोभ और प्रलोभन के चक्कर में पड़कर अपनी मौलिक रुचि और प्रतिभा के विपरीत काम की ओर लग जाते हैं या किसी वरिष्ठ या ऊंचे व्यक्ति के दबाव में आकर लक्ष्य या काम का निर्धारण कर लेते हैं तब इसमें भी सफलता नहीं मिल पाती है।

सफलता के लिए पहली शर्त यह है कि लक्ष्य और लक्ष्य से संबंधित काम अपनी रुचि और प्रतिभा के अनुकूल और अनुसार ही होना चाहिए। दूसरी शर्त यह है कि अपनी रुचि और प्रतिभा के अनुसार कार्य में उसके कार्य की प्रक्रिया को अपने विवेक के अनुसार ही अपनाना चाहिए। अपनी अंतरात्मा या अंत:करण की आवाज के अनुसार ही प्रक्रिया के तहत आगे बढ़ना चाहिए। यहां भी लोभ, प्रलोभन और दबाव में नहीं आना चाहिए। तीसरी शर्त यह है कि कार्य श्रम साध्य और समय साध्य दोनों ही हैं यानी इसमें श्रम भी लगता है और समय भी लगता है। विलंब होने पर उबना नहीं चाहिए। क्योंकि उबने पर या उब जाने पर कार्य को छोड़ देते हैं लोग। उबकर बीच में भाग जाते हैं और दूसरे कार्य की तलाश में लग जाते हैं।

श्रम साध्य और समय साध्य होने के कारण सफलता में बिलंब होना स्वाभाविक है। इसके लिए तपस्या अनिवार्य है। लक्ष्य एवं उद्देश्य की गहराई या सूक्ष्म निरीक्षण कार्य की प्रक्रिया का ठीक होना जरूरी है। साथ ही कार्य में कभी छिछलापन नहीं होना चाहिए। कार्य के प्रति गंभीरता और तत्परता जरूरी है। तत्परता तो जरूरी है, परन्तु हड़बड़ी या उतावलापन जरूरी नहीं है। गीता में अन्तर्निहित शरीर, वाणी और मन संबंधी तप को ध्यान में रखकर कार्य में मस्त, व्यस्त या संलग्न होना अनिवार्य है। बिना तपस्या के सफलता संभव नहीं है। कार्य होने की अवधि में यथासंभव गोपनीयता भी अनिवार्य है। यह गोपनीयता भी तपस्या ही है जो गीता में निर्धारित मन संबंधी मौन रूपी तप है। गोपनीयता रूपी तक के भंग होने पर भी सफलता में बाधा पहुंचती है। सब तरह से अपने उद्देश्य एवं लक्ष्य की प्राप्ति या सफलता के लिए तपस्या अनिवार्य है।

**–किशोर भवन, काजीपुर क्वार्टर्स**
**डॉ. ए. के. सेन पथ, पटना-800004**

# और देव सो जाएंगे

**राजीव कटारा**

आषाढ़ की महाएकादशी को हरि शयन को चले जाते हैं। अपने देव भी सोते हैं! लेकिन वे तो सब कुछ करते हैं, जो हम करते हैं। वह बच्चे की तरह मचलते हैं। युवाओं की तरह प्रेम करते हैं। गृहस्थ की तरह रहते हैं। जब प्रभु सब कुछ करते हैं, तो सोएंगे क्यों नहीं! इसलिए उन्हें अवतार ही नहीं, मनुज अवतार कहते हैं। दरअसल, अपना समाज खेतिहर रहा है। मौसम के साथ उसका अटूट रिश्ता रहा है। बरसात के साथ ही उसकी जिंदगी चलती है। यात्रा के लिए यह मौसम अच्छा नहीं माना जाता। इसलिए यात्राएं करने की मनाही है। जो जहां है, वहीं रहे। बेकार में इधर-उधर न घूमे-फिरे। शादियों पर खासतौर से रोक लगती है। वह तो खैर ग्रामीण समाज था, लेकिन आज भी बारिश में शादियां करना कितना मुश्किल है? यह कोई भी जानता है।

इस बरसाती मौसम में देव सुलाने की पहल किसने की? यह तो नहीं जानता, लेकिन इतना तो तय है कि यह मास्टरस्ट्रोक था। ये महीने खेती-बाड़ी के लिए बेहद अहम होते हैं। आप अपनी खेतीबाड़ी पर ध्यान दें। अपनी जमीन पर रहे। तो यह पूरा बारिश का मौसम आराम से निकल जाएगा। खेती भी ठीक होगी। उसके होने से अनाज की कमी नहीं होगी। पैसे-धेले की दिक्कत नहीं आएगी। और बेवजह आप बरसात में भटकेंगे नहीं। सो, देव सुला कर बेहद जरूरी कामों को छोड़ बाकी कामों पर रोक लगा दी। यानी आप अपने खेत-खलिहान देखें। इसके अलावा घरों में रहें। काम करें और प्रभु का नाम जपें। यानी मजबूरी के अलावा तमाम बेहतर काम करें। और जब मौसम ठीक हो जाए, आकाश साफ हो जाए, तो देवों को जगा दो। तब तक खेती का असल काम निबट ही लेगा। आपके पास इतनी फुरसत भी होगी कि आप शादी-ब्याह कर सकें। कहीं घूम-फिर सकें या काम कर सकें इसीलिए कार्तिक शुक्ल एकादशी पर देवों को जगा दिया जाता है। हरि उठ जाते हैं। जिंदगी अपनी रफ्तार पकड़ लेती है। वाह!

# सत्य को जानें

**आपका शरीर, एक शरीर नहीं एक मंदिर है। इस मंदिर में जो बैठा है वह आप हैं। यह शरीर आप नहीं हो सकते, यह बुद्धि आप नहीं हो सकते।**

महायोगी पायलट बाबा

यह प्रकृति, यह पृथ्वी आपसे सब कुछ छीन लेगी। यह आपका घर नहीं, यह तो आपके कर्मों के कारण आपको उपलब्ध है। कर्म ही घर बनाते हैं। संस्कार बनाते हैं। आपके कर्म ही आपका भाग्य बनाते हैं, आप कर्म के धनी बने। हम बिछुड़ चुके हैं उस सत्य से, हम दूर हो चुके हैं अपने अस्तित्व से। हम बहुत दूर यात्रा कर चुके हैं, दूर हो चुके हैं उस परमात्मा से जहां से हम चले हैं। उसके करीब जाने के लिए उसे प्राप्त करने के लिए।

आपको किसी यात्रा की जरूरत नहीं। आप कहीं भी यात्रा करें, लौट कर आपको अपने ही घर आना होगा और यह पता लगाना होगा कि वह घर कौन-सा है और जब तक आप उस घर का पता नहीं लगा पाते तब तक यह यात्रा आपको अपने निज की ओर यानी परमात्मा की ओर नहीं ले जा सकती और जब तक यह उपलब्ध नहीं होगा तब तक आप दुखी रहेंगे। चाहे आप कुछ भी करें, चाहे आप दिन भर

माला जपते रहें, किसी का नाम लेते रहें, आपका भला नहीं होगा। क्योंकि आप सत्य को नहीं जानते। आप किसी से जुड़ना चाहते हैं, आप किसी से मिलता चाहते है, किसी का नाम लेते रहें, आपका भला नहीं होगा। क्योंकि आप सत्य को नहीं जानते। आप किसी से जुड़ना चाहते हैं, आप किसी से मिलता चाहते हैं, किसी का होने में, आपकी अस्मिता, आपका अस्तित्व खो जाता है। आप गुलामी की ओर जाते हैं, चाहे आप प्रेममय होंगे, आनंदयमय होंगे, भक्तिमय होंगे, योगमय होंगे, चाहे आप किसी प्रभु के नाममय होंगे।

एक बहुत कडुआ सत्य कह रहा हूं। आपका शरीर, एक शरीर नहीं एक मंदिर है। इस मंदिर में जो बैठा है वह आप हैं। यह शरीर आप नहीं हो सकते, यह बुद्धि आप नहीं हो सकते, वह शक्ति आप नहीं हो सकते। शक्ति के विभिन्न नाम काली, सरस्वती, लक्ष्मी आदि अपनी-अपनी कलाओं से अवतरित होती है। वे कहती जाती है कि तुम अपनी खोज करो, स्वयं की खोज में निकलो। अगर तुम्हारी यात्रा मेरी तरफ होगी तो तुम मेरे लोक को प्राप्त करोगे, अपने लोक को प्राप्त नहीं करोगे। इसी कारण तुम्हारी मुक्ति नहीं होगी और जब तक आप निज को नहीं जानोगे, अपनी-अपनी यात्रा पर नहीं निकलोगे, आप अपने लोक को प्राप्त नहीं होगे। मुझ तक आपकी यात्रा वही है। तुम्हें तो स्वयं खोज करनी है अपने मन को मंदिर बनाना है। ●

# जीवन प्रदाता शिव अभिषेक

प्राची प्रवीन माहेश्वरी

भगवान शिव अपने आप में तो संपूर्ण शक्ति हैं ही साथ ही जो भी इनके साथ हो जाता है वो भी शक्तिवान हो जाता है। भगवान शिव को प्रसन्न करने का सबसे सरल उपाय है रुद्र अभिषेक। रुद्र अभिषेक एक नहीं अनेक तरह से किया जाता है यानी हर मनोरथ के लिए अलग तरीका तो जाने व लाभ उठाएं-

- रोग नाश हेतु कच्चे दूध व गंगा जल से भगवान शिव का अभिषेक करें।
- शत्रु निवारण हेतु काले शिवलिंग पर सरसों के तेल से अभिषेक करें।
- संतान प्राप्ति हेतु मक्खन से शिवलिंग पर गंगाजी से अभिषेक करें।
- लक्ष्मी प्राप्ति हेतु स्फटिक शिवलिंग पर दूध से अभिषेक करें।
- आयु वृद्धि हेतु गाय के घी से शिवलिंग का अभिषेक करें।

- श्री, कीर्ति, यश, धन, प्राप्ति हेतु स्फटिक पर श्री यंत्र रखकर अभिषेक करें
- तंत्र मंत्र की सिद्धि प्राप्ति हेतु पारद शिवलिंग का अभिषेक करें।
- मकान, जमीन, जायदाद आदि की प्राप्ति हेतु शहद से अभिषेक करें।
- दही को छानकर कपड़े में लपेटकर उस दही से जो शिवलिंग बनता है, उसका अभिषेक करने से माता लक्ष्मी का आशीर्वाद मिलता है।
- किसी भी फल को शिवलिंग मानकर पूजा करने से फल वाटिका में अधिक व उत्तम फल की उत्पत्ति होती है।
- बांस के अंकुर को काटकर उसकी पूजा करने से वंश वृद्धि होती है।
- चीनी की चाशनी का शिवलिंग बनाकर उसकी पूजा करने से सुख, शांति, सौभाग्य मिलता है।
- मिश्री के बनाए शिवलिंग की पूजा करने से रोग से छुटकारा मिलता है।
- आंवले को पीसकर शिवलिंग बनाकर पूजा करने से मुक्ति मिलती है।
- पत्तियों का शिवलिंग बनाकर पूजा करने से स्त्रियों के सुख-सौभाग्य में वृद्धि होती है।
- गेहूं, जौ व चावल का आटा पीसकर उसे गूंथकर शिवलिंग बनाकर पूजा करने से स्वास्थ्य, श्री व संतान की प्राप्ति होती है।
- फूलों के शिवलिंग के पूजन से भू-संपत्ति की प्राप्ति होती है।
- कस्तूरी, चंदन के मिश्रण को मिलाकर शिवलिंग की पूजा करने से पति-पत्नी में आपसी प्रेम बढ़ता है।
- गुड़ में गेहूं दाना चिपकाकर शिवलिंग बनाकर अभिषेक करने से फसल अच्छी होती है।
- कालसर्प व पितृदोष दूर करने हेतु नासिक में त्र्यम्बकेश्वर भगवान शिव के ज्योतिर्लिंग का दर्शन व पूजन करना चाहिए।
- मारकेश की स्थिति में भगवान शिव का रोज अभिषेक करें।

# पहले क्यों नहीं दिखतीं किसी की अच्छाइयां

कपिल कौशिक

अभी कुछ समय पहले एक परिचित व्यक्ति के निधन के बाद शवयात्रा के साथ मैं श्मशान घाट गया। वहां पर और भी बहुत से लोग मृत परिजनों या नजदीकी लोगों के क्रियाकर्म के लिए वहां आए हुए थे। वे सभी दुखी थे, रो रहे थे। यूं तो हर कोई उस व्यक्ति के बारे में अलग-अलग बातें कर रहा था, पर उनमें एक समानता भी थी। हर कोई कह रहा था कि मरने वाला बहुत अच्छा इंसान था।

वहां मेरे एक परिचित मिले, जो किसी और की शवयात्रा में शामिल होने आए थे। मैंनें उत्सुकतावश उनसे पूछ लिया कि क्या हुआ, कौन था जिसकी मृत्यु हो गई है। उन्होंने जो जवाब दिया, उसे सुनकर आश्चर्य हुआ। मरने वाला व्यक्ति उनका पड़ोसी था। उन्होंने बताया कि उस व्यक्ति की हरकतों से पूरा मोहल्ला परेशान था। पर आश्चर्य! उसी व्यक्ति के अंतिम संस्कार के मौके पर वहां मौजूद सभी लोग दुखी नजर आ रहे थे। यदि वह व्यक्ति पूरे मोहल्ले के लिए समस्या था, तो इन सभी को तो खुश होना चाहिए था। पर अब, जबकि उसकी मृत्यु हो गई है तो सभी उसकी कमी महसूस करते दिख रहे थे। कई लोग तो उस व्यक्ति को अच्छाइयों का जिक्र कर रहे थे या सच में दुखी थे? लोग चले गए पर मेरे मन में एक प्रश्न रह गया। किसी के जीते-जी हमें उसकी अच्छाइयां क्यों नहीं दिखतीं? जिसे हम मुखाग्नि देते हैं या शवयात्रा में शामिल होकर जिसकी मृत्यु का शोक मनाते हैं, उसके जीवित रहते तो उसे देखने तक से नफरत करते हैं। आखिर क्यों मरने के बाद वही व्यक्ति हमें इतना अजीज हो जाता है कि हम उसके शोक में उसे अपने कंधों पर लेकर चलते हैं।

शायद इसका कोई सामाजिक कारण हो। मृत्यु हो जाने पर किसी व्यक्ति की बुराई नहीं करनी चाहिए- हमें ऐसी सीख बचपन से दी जाती है। पर उसके जीते जी हम उसके बारे में बुरा क्यों बोलते हैं? अगर कोई व्यक्ति कोई गलत कार्य कर रहा है, तो उसे सही रास्ते पर लाने के बजाय उसे ताने देते हैं। यदि वह काफी

ताकतवर व्यक्ति हुआ और उसके सामने कुछ कहने का साहस नहीं कर सकते, तो पीठ पीछे उसकी बुराई करते हैं। कोई इस पर विचार नहीं करता कि आखिर वह व्यक्ति कोई गलत काम क्यों कर रहा है। यदि ऐसे व्यक्ति को समझाया जा सकता था और उसे बुराई के रास्ते से हटाया जा सकता था, तो उसके जीवित रहते लोग यह काम क्यों नहीं करते?

एक तर्क यह भी हो सकता है कि मरने के बाद इंसान खुद का बचाव करने के लिए मौजूद नहीं होता। इसलिए हम उसे अच्छा कहकर उसकी आत्मा को शांति देने की कोशिश करते हैं। लेकिन जब वह इंसान जिंदा होता है और अपने बचाव में कुछ कह सुन सकता है, तब क्यों हम अपने कान बंद कर लेते हैं और सिर्फ अपने नजरिये से उसे देखते हैं। क्यों हम उसका पक्ष नहीं सुनते, क्यों उसे माफ करने के बजाय सिर्फ उसकी गलतियों पर ध्यान लगाते हैं और उसकी बुराई करने से नहीं चूकते।

हो सकता है कि एक सास की कभी अपनी बहू से न पटे, एक देवरानी अपनी जेठानी को फूटी आंख न देखना चाहे। रिश्तेदारी और मित्र-परिचितों में ऐसे कई व्यक्ति हो सकते हैं जो शायद जीवन भर एक-दूसरे को कभी पसंद न करें। जब तक आमने-सामने रहते हैं, हमेशा एक-दूसरे को कोसते रहते हैं, पर किसी एक के जाते ही दूसरा शोक करने लगता है।

ऐसी स्थिति में शोक करने और मरने वाली की अच्छाई का जिक्र करने में कोई समस्या नहीं है पर यदि हम अगर एक बार उस व्यक्ति की बात सुनकर भरोसा करें और उसे सुधरने का मौका दें तो शायद वह व्यक्ति समाज में बेहतर स्थान हासिल कर सके। मरने के बाद तो हम व्यक्ति की आत्मा की शांति के लिए तेरहवीं, बरसी, श्राद्ध और न जाने कितने ही दान-पुण्य के काम करते हैं। पर अगर एक व्यक्ति को उसके जीते जी समझने की कोशिश करें तो शायद वह व्यक्ति जीवित रहते हुए ही दूसरे लोगों के मुंह अपनी प्रशंसा सुनने का सुख पा सके। ●

# भारत बदला, लोग बदले

भारत में सबसे बड़ा बदलाव 90 के दशक में हुआ जब इकॉनमी और मीडिया को कई छूटें दी गईं। एक देश के कल्चर और शेष विश्व के सामने भारत की छवि के एक्सपोजर के मद्देनजर ये बदलाव टर्निंग पॉइंट साबित हुए।

इससे न केवल सेक्स, लव और दूसरी कई महत्वपूर्ण बातों को लेकर हमारे नजरिए में फर्क आया बल्कि हम खुद भी इस कारण कई मायनों में बदले। हालांकि पारिवारिक मूल्यों और समुदायों के प्रति संवेदनशीलता के मामले में भारतीय अब भी पहले की तरह सोचते हैं लेकिन व्यक्तिगत अपेक्षाओं के संदर्भ में लोगों का बर्ताव काफी बदल गया है।

जहां तक उस वैयक्तिकता की सीमाओं का सवाल है, जिसमें जहां आप खत्म होते हैं और जहां सोसायटी शुरू होती है, तो इसमें भी इस दौरान उसमें भी काफी परिवर्तन आया है। एक कलाकार के नजरिए से देखें तो यह दुनिया हर वक्त बदलती रहती है। मुझे ऐसा महसूस होता है कि जब भी मैं कोई नई बात या कहानी रचती हूं तो उससे व्यक्तिगत रूप से मैं खुद भी समृद्ध होती हूं।

**-आभा दवेसर**
**अंग्रेजी की चर्चित लेखिका**

# परोपकार का यथार्थ

**डॉ. कुलभूषण लाल मखीजा**

अपने से दूसरों का जो भी कार्य बन सके वह कर देना ही परोपकार है। इसे ही परहित, सेवा, परमार्थ और पुरुषार्थ भी कहा है। परोपकार अर्थात दूसरों के समीप ले जाने वाला कर्म करके उनकी प्रसन्नता प्राप्त कर लेना है। यह सेवा यदि ज्ञान सहित की जाए तथा आत्मरूप जानकार की जाती है तो श्रेष्ठ कहलाती है। पुरुषोत्तम दृष्टि से की जाने वाली सेवा को परमार्थ संज्ञा दी जाती है। इससे वास्तविक कल्याण अनुभूति तथा पुरुषार्थ होता है जिससे हमें अचल सुख की प्राप्ति होती है। जो परिश्रम या पुरुषार्थ करेंगे उन्हें सत फल प्राप्त होता है। किन्तु हमें सेवा, परोपकार करने की स्वतंत्रता है, अधिकार है पर फल का अधिकार नहीं है।

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मां फलेषु कदाचन।' अनन्यरूप से अर्थात 'मेरे से पृथक नहीं' ऐसा समझकर जो विश्वरूप की सेवा करते हैं उस पुरुषार्थी को विशेष अधिकार या फल प्राप्त होता है, क्योंकि उनका व्यष्टि अहंकार लय हो जाने से व्यष्टि भाव रूपी परोपकार का समष्टि भाव पुरुषार्थ प्रगट होने लगता है।

सेवा करने से संतोष भी मिलता है किन्तु सेवा के साथ स्मरण भी जरूरी है। जब हम स्वयं संतुष्ट होंगे तभी दूसरे पर दया आयेगी और पर उपकार करने का मन होगा। स्मरण यह रहना चाहिए कि सबमें एक परमात्मा व्याप्त है तभी यथार्थ सेवाभाव प्रगट होता है। सामान्यतया सेवा की भावना कमजोर, वृद्धजन, असहाय, गरीब, बीमार, बच्चे आदि के प्रति अवश्य जागृत होती है।

परोपकार में यदि स्वार्थ भाव जागृत होता है तो वह यथार्थ सेवा नहीं कहलाती है। निजी सुख एवं फलेच्छा भावयुक्त किया गया सहयोग सेवा नहीं है। अपने आप को सेवक जानकर संसार में नि:स्वार्थ कार्य निष्पादन ही मानवीयता है।

स्वयं के कल्याण के साथ-साथ विश्व के कल्याणार्थ प्रयत्नशील व्यक्ति पुरुषार्थी कहाते हैं, उन्हें ऐसे कार्यों से सुभाग्य प्राप्त होता है। वही धर्मशील कहलाते हैं-

**परहित सरिस धर्म नहीं भाई।**
**पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।।** –तुलसीदास

सेवा या परोपकार के नाम पर स्वार्थ साधना कुटिल वृत्ति कही गई है। परोपकार की सच्ची दृष्टि तब होती है जब हम नि:स्वार्थी हों, किसी की बुराई न करें, अन्य सेवक को बुरा न माने और सुख की आशा भी न करें। प्रसन्नता एवं खुशी से सेवा, उपहार देना ही सौभाग्यप्रद एवं सुखद होता है। सच्ची सेवा में व्यक्ति सर्वप्रथम स्वयं का सुधार करता है। वह शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक रूप से स्वस्थ, संयमी, विवेकशील, अहं रहित तथा चित्त चिंतन से मुक्त रखते हुए विश्वरूप की सेवा करता है।

परोपकार की सच्ची प्यास लगने पर मत, पंथ, जाति, रूप, धन, शिक्षा आदि कारणों की मीमांसा करने की इच्छा नहीं होती है। देह की दृष्टि से जिनके साथ हमारा कोई रिश्ता नहीं उनका उपकार करना ही विशेष रूप से परोपकार है। ऐसे परोपकार व परोपकारी व्यक्ति से कई लाभ चमकते हैं जैसे निष्काम कर्म प्रेरणा, आत्मभाव, अहंहीनता, देहममत्व रहितता, प्रसन्नतायुक्त कार्यनिष्पादन और नि:स्वार्थ सेवा आदि।

सेवाधर्म या परोपकार कठिन होता है। यह एक कर्तव्य है, व्रत है, व्यवसाय नहीं है। आजकल सेवा के नाम पर स्वहित साध लेना भ्रष्टाचार आदि कार्य व्यापक हो गए हैं। इसलिए आत्मनिरीक्षिण का समय है। सेवा कार्यों में व्याप्त बुराइयों को त्याग कर सत्य पर आरूढ़ रहकर 'सत्य ही ईश्वर है' जानकर कर्तव्य कर्म निष्पादन एवं नि:स्वार्थ परोपकार ही यथार्थ सेवा कहलाएगी।

यदि दूसरों का हित करने की इच्छा या क्षमता नहीं हो तो व्यक्ति अपने स्वयं के हित-सुख हेतु तो स्वतंत्र है ही, सक्षम भी है। तो फिर हम क्यों न सुखद-आचरण, भाषण, चिंतन न करें, जैसे गोस्वामी तुलसीदास ने 'स्वान्त: सुखाय रघुनाथ गाथा' लिखकर अपने साथ-साथ समाज को भी सुखानुभूति दी है। किन्तु खेद तो इस बात है कि हम अपने-आत्मजनों का हितकारी कर्म करने की बजाए दूसरों का अहित कैसे हो?

इस ओर योजनाएं बनाकर अपने समय, शक्ति धन आदि का अपव्यय करते हैं। इस प्रकार की अमानवीय प्रवृत्तियों को हतोत्साहित करने की जरूरत है और ज्ञानमुक्त परस्पर विवेचन से यथार्थ परोपकार कर्म में प्रवृत्त होकर अपने जीवन को सफल बना सकते हैं। परोपकार या सेवा के स्वरूप कई हो सकते हैं जैसे समय, धन, जन का सहयोग, हितकारी परामर्श, स्वास्थ्य संबंधी साधन-सहयोग आदि।

**-16, राघवेन्द्र नगर**
**ग्वालियर-474002**
**(मध्य प्रदेश)**

---

# शुद्ध

आपकी मुस्कान में उपचार की शक्ति होती है। यह आपका और आपके साथी का उपचार कर सकती है। जब आप इस तरह निर्मल होकर मुस्करायेंगे तो आपके सामने बैठा व्यक्ति भी मुस्करायेगा। संभव है, इस प्रक्रिया के पूर्व सामने वाले की मुस्कुराहट पूर्ण न हो। उसमें शुद्धता केवल 90 प्रतिशत हो।

लेकिन अगर आप मन से मुस्कुराते हुए अभिवादन करेंगे तो अपने सामने बैठे व्यक्ति को जवाब में 100 प्रतिशत शुद्ध मुस्कुराहट उत्पन्न करने की ऊर्जा देंगे। फलस्वरूप उसके भीतर उपचार की शक्ति स्वत: काम करने लगेगी। भोजन की इस प्रक्रिया में आप उसके रूपान्तरण और स्वास्थ्य निर्माण में भूमिका निभाते हैं।

**-प्रकाश जैन**
**प्रीत विहार, दिल्ली**

# मनुष्य के दो शत्रु: चिंता और भय

रेनू सैनी

जब शिशु जन्म लेता है तो वह सिर्फ रोना व हंसना जानता है। जीवन के दांवपेंच वह इस सभ्य समाज के बीच ही सीखता है। ऐसे में भय व चिंता का सामना भी उसे इन्हीं सब के बीच होता है। और इनको शिशु के मस्तिष्क में रोपने की क्रिया बहुत पहले से ही आरंभ हो जाती है। इसे माता-पिता और परवरिश देने वाले लोग ही अपने शिशु के जेहन में डालते हैं।

मशहूर चिंतक हैलेन क्रेन ने एक जगह लिखा है कि भय हमारी आध्यात्मिक, चारित्रिक अथवा शारीरिक दुर्बलताओं की स्वीकृति मात्र है। मनुष्य का जब जन्म होता है तो उसे चिंता, भय, तनाव, लाभ, हानि आदि किसी का कुछ भी ज्ञान नहीं होता। ये सारी बातें वह बड़ा होने के क्रम में सीखता है।

इनसे इतर यदि मनुष्य यह सोचे कि चिंता व भय जैसी चीज इस दुनिया में है ही नहीं, तो जीवन बहुत सरल बन जाए। हालांकि यह बात बहुत अचंभित कर देने वाली लगती है कि जीवन में चिंता व भय न हो। यह कैसे मुमकिन है?

दुनिया की विभिन्न सभ्यताओं में सदियों से दादा-दादी और नाना-नानी की कहानियां एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक चलती रहती हैं। उन कहानियों में परियों व भूतों की बातें सुनकर बालकों के अबोध मन में भय बैठ जाता है। इनके अलावा, कई बार बच्चा जब अपने माता-पिता से बाहर घूमने या कुछ लेने की जिद करता है तो वे भी टालने के लिए कहते हैं, 'शोर करोगे तो बाबा पकड़ कर ले जाएगा।' बच्चा पहले तो यह समझ नहीं पाता, किन्तु जब यह बात उसके सामने बार-बार दोहराई जाती है तो उसके मन में उसका भय बैठ जाता है। वह शिशु जब बड़ा होकर अपना कोई काम करता है तो कई बार शुरू में मध्य में या सफलता के निकट पहुंचने से पहले वही भय उसे परेशान करता है। भय बना रहता है, उसका वाहक बाबा की जगह कोई और बन जाता है। भय का बीज मन में पहले से पड़ा हुआ है कि ऐसा करने से वैसा नुकसान हो जाएगा।

भय के बाद ही मन में चिंता व्याप्त होती है। यह आत्मा, मन या शरीर की हार है, इसलिए भय के बाद चिंता का जन्म होता है और चिंता का सीधा अर्थ है इच्छानुसार कार्य कर पाने की असमर्थता। चिंता के शरीर में घर करते ही मन की भांति शरीर के अंग भी पहले अस्थायी और

बाद में स्थायी रूप से शिथिल हो जाते हैं।

चिंता की अपनी कोई शक्ति नहीं होती, इसे मनुष्य ही अपनी ऊर्जा से जगाता है और अपने ऊपर अधिकार कर लेने के लिए प्रोत्साहित करता है। जैसे-जैसे चिंता व्यक्ति के मन में व्याप्त होती जाती है, वैसे-वैसे उसकी प्रतिरोधक क्षमता घटती जाती है और वह अनेक शारीरिक व मानसिक व्याधियों का शिकार बनने लगता है। कई बार तो चिंता मनुष्य को डिप्रेशन का शिकार बना देती है।

इन सबके विपरीत, जो मन में यह धारणा बनाते हैं कि मैं इस कार्य को अवश्य कर डालूंगा-वे कठिन से कठिन लक्ष्य को भी अपने मनोबल से पूर्ण कर लेते हैं। ऐसे असंख्य उदाहरण हमारे सामने हैं। वे चिंता की वृत्ति का सकारात्मक प्रयोग करते हैं। मसलन प्रगति करने की चिंता और उस चिंता से कर्मरत होने की प्रेरणा।

बड़े और समझदार बनने के बाद एक हद तक भय व चिंता के जन्मदाता हम स्वयं ही होते हैं। क्योंकि उन्हें पाल-पोसकर हम बड़े वृक्ष में बदल लेते हैं। इन दोनों से मुक्ति संभव है, किन्तु इसके लिए व्यक्ति को कर्मशील बनना होगा। जो अपने कार्य में निरंतर व्यस्त रहता है, उसके मस्तिष्क में इन सब बातों के आने का मौका ही नहीं मिलता। निश्चित रूप से ऐसा करने से आपका न सिर्फ जीवन खुशहाल हो जाएगा, बल्कि आपके लिए सफलता के द्वार भी खुले नजर आयेंगे। ●

## सुखी परिवार फाउंडेशन की एक अपील

उत्तराखण्ड में बाढ़ और भूस्खलन से कई गांव और कस्बें तबाह हो गये हैं। सड़के ध्वस्त हो गई हैं। पुल टूट गये हैं। संचार सेवाएं ठप्प हैं। केदारनाथ धाम भी इसकी मार से अछूता नहीं रहा। यह तय है कि मरने वालों की संख्या बड़ी हैं, पर कितने लोगों की जान गई है इस बारे में कभी पूरे दावे के साथ नहीं कहा जा सकता। जानमाल की जानकारी सामने आने में बहुत समय लग चुका है और अभी महीनों लग सकते हैं, इस प्राकृतिक आपदा से प्रभावित लोगों की मदद के लिए 'सुखी परिवार फाउंडेशन' तत्पर है। आपकी ओर से की गई मदद पीड़ित लोगों के जीवन को जोड़ने की महत्वपूर्ण कड़ी बनेगी।

आपके द्वारा भेजी गई कोई भी मदद सेक्शन 80-जी के तहत कर में छूट की हकदार है। कृपया अपने नाम के साथ पिनकोड, फोन/मोबाइल नंबर और परमानेंट अकाउंट नंबर (पैन) के साथ पूरा पता भेजें ताकि कर संबंधी प्रमाण पत्र आपको भेजा जा सके। राशि भेजते हुए 'उत्तराखण्ड राहत' का उल्लेख करें।

आप अपने चेक/डीडी 'सुखी परिवार फाउंडेशन' नई दिल्ली में देय के नाम से इस पते पर भेजें।

**सुखी परिवार फाउंडेशन**

ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-110092

फोन: 011-22727486, मो. 9811051133

# कल्पना के पंख लगाइए

आरती जैन-खुशबू जैन

इच्छाशक्ति, संकल्पशक्ति, आस्था और प्रयोग की निरंतरता- ये चार तत्व हर व्यक्ति को सफलता की ऊंचाइयों पर ले जाती हैं। मनुष्य में यदि जीवित कल्पना हो, तो वह आपत्ति का भी अपने विकास में उपयोग कर लेता है। इसके विपरीत यदि कल्पना का अभाव हो, तो वह पास में साधन और अवसर होते हुए भी पिछड़ जाता है। जो लोग कल्पनाशील होते हैं, वे अपनी कल्पनाओं का रचनात्मक उपयोग करते हैं और उन कल्पनाओं के आधार पर वे बड़े-बड़े कामों की नींव रखते हैं।

टाटा प्रतिष्ठान के संस्थापक जमशेदजी टाटा का एक बार पूना से बम्बई आ रहे थे। पहाड़ियों पर बरसनेवाले पानी को देखकर उनके मन में कल्पना जगी कि क्या उस पानी को रोककर कोई उपयोग नहीं किया जा सकता? परिणामस्वरूप टाटा कम्पनी ने लोनावला में पानी रोककर खोपवली में बिजली-निर्माण का काम शुरू किया। इसमें टाटा ने धन ही नहीं कमाया, बल्कि देश की एक बड़ी सेवा भी की।

हम देखते हैं कि कई धनवानों और रईसों की संतानें कल्पना के अभाव में पुराने तरीके और परम्परा से चले आये धंधे से चिपटे रहकर जहां की तहां ही नहीं रहे, उल्टे पिछड़ भी गये हैं। लेकिन कइयों ने आरामतलबी के धंधों का भविष्य उज्ज्वल न देख नये-नये क्षेत्रों में प्रवेश किया और प्रसिद्ध उद्योगपति बन गये। उन्होंने बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों की स्थापना की।

व्यापार में पूंजी और अनुभव की तरह सूझ-बूझ का भी बड़ा महत्व है। वह आपकी बहुत बड़ी शक्ति है, जिसके आधार पर आप सफल और समृद्ध बन सकते हैं। कल्पना और सूझ-बूझ केवल व्यापार या व्यवसाय में ही सहायक होती हो, ऐसी बात नहीं है, वह नौकरी और काम पाने में भी मददगार बनती है। बिना सूझ-बूझ वाले नौकरी मांगने जाते हैं, जबकि सूझ-बूझ वाले व्यक्ति काम मांगने जाते हैं और इस तरह काम करते हैं कि मालिक के लिए वे अनिवार्य बन जाते हैं। काम पाकर भी यदि आप अपने मालिक के लिए उपयोगी नहीं बनेंगे, तो आपकी उन्नति असंभव है। मालिक को उसके कार्य में सहायक बनकर ऐसी सलाहें दीजिए, जिससे उसका व्यवसाय बढ़े। दूसरी बात यह है कि सबको अपने मन का काम ही मिले, यह संभव नहीं है। इसलिए जो काम मिले, उसे अच्छे-से-अच्छा करके अपना विकास कीजिए।

जीवन के हर क्षेत्र में और खासकर व्यापारी क्षेत्र में, सूझ-बूझ वाले व्यक्तियों की बेहद मांग है और वह सदा रहेगी। जिस चीज की अधिक मांग होती है, उसका मूल्य भी स्वभावत: बढ़ जाता है। इसलिए सदा सीखने की वृत्ति, कल्पना व सूझ-बूझ ही आगे बढ़ाने में सहायक होती है। अत: जिनके मन में आगे बढ़ने की आकांक्षा होती है, वे सदा सीखने को तैयार रहते हैं। नयी-नयी उपयोगी कल्पनाओं और सूझ-बूझों को अपनाकर उन्हें पूर्णरुपेण कार्यरूप में परिणत करने का प्रयत्न करें, यही विकास का मार्ग है।

महावीर ने 'काले कालं समायरे' जैसे समय प्रबंधन एवं जीवन प्रबंधन के सूत्र दिए। जो व्यक्ति समय को पहचानता है, हर कार्य समय पर ही करता है वह सफलता के नये कीर्तिमान स्थापित करता है।

धन बिना सहयोग के नहीं कमाया जा सकता और अधिक मात्रा में कमाना हो तो अधिक लोगों से संपर्क साधना पड़ता है। बने हुए संबंध तभी निभते हैं, जब उचित व्यवहार किया जाए। यदि संबंधों से अनुचित लाभ उठाने की वृत्ति होती है, तो संबंध निभ नहीं सकते। इसलिए संबंध जुड़ने पर वे स्थायी कैसे बनें, इस विषय में सावधानी बरतनी चाहिए। यदि आपका ग्राहक कोई शिकायत करे, तो उसे शांति से सुनकर बिना दलील दिये वह शिकायत दूर कीजिए।

आत्मनिरीक्षण या आत्मदर्शन वही व्यक्ति कर सकता है जो पहले स्वयं को देखता है फिर दूसरों की ओर अंगुली निर्देश करता है। स्वयं को देखनेवाला व्यक्ति ही अपनी क्षमताओं को उजागर कर सकता है। हर व्यक्ति की अपनी कोई-न-कोई विशेषता होती है। बचपन में कई बालक स्वभाव से बड़े ऊधमी व नटखट पाये जाते हैं, तो कई शांत और गंभीर होते हैं। किसी में बचपन से ही हिसाबीपन पाया जाता है, तो कई खर्च के मामले में बिलकुल उड़ाऊ होते हैं। किसी में चीजें संभालकर रखने की वृत्ति पायी जाती है, तो कई तोड़-फोड़ करने वाले होते हैं। कोई पढ़ने-लिखने में तेज होता है, तो किसी को खेल-कूद में विशेष रुचि होती है। रुचि की यह स्वाभाविक भिन्नता उम्र के साथ बढ़ती ही जाती है। बचपन के संस्कार बड़ी उम्र में कुछ अधिक दृढ़ और परिष्कृत हो जाते हैं।

क्या हेनरी फोर्ड को प्रारंभ में यह कल्पना थी कि वह मोटरों के उद्योग में इतनी सफलता प्राप्त कर सकेगा? लेकिन दीर्घ प्रयत्न, दृढ़ संकल्प, लगन और अपनी विशिष्ट शक्ति के योग उपयोग से उसने बहुत बड़े और अद्‌भुत काम कर दिखाये। उसे बचपन से यंत्रों से प्रेम था। वह अपनी विशेषता के पीछे पागल हो गया और वह पागलपन ही उसके विकास का आधार बना। हेनरी फोर्ड की पत्नी ने अपने दाम्पत्य जीवन की बीसवीं सालगिरह पर कहा था, 'हेनरी के लिए पहले मोटर है, दूसरी हठ और तीसरी मैं।''

अन्य लोगों में जो विशिष्टताएं हैं, वे आपमें नहीं है, इसलिए न तो निराश होने की जरूरत है और न उनसे ईर्ष्या करने की। प्रकृति ने आपको जो शक्तियां दी हैं, आपमें जो विशिष्टताएं हैं, उनका विकास करें, यही आपकी उन्नति का सूत्र है।

हर आदमी को अपनी रुचि का काम तुरंत मिल जायेगा, ऐसी बात नहीं है। वैसा काम न मिले, तब तक जो काम मिले, उसी में लग जाइए और उसी काम को अपनी रुचि के काम की सीढ़ी समझिए। बाद में जब अवसर मिले, तब अपनी रुचि के काम में लग जाइए। यह बात कभी न भूलिए कि आपको अपनी रुचि का तथा जिस काम को आप अच्छी तरह से कर सकते हैं, वही काम करना है। जो अपनी शक्तियों का विकास करके महान बने हैं, उन्होंने यही किया है और आप भी वैसा ही कीजिए। भारतरत्न विश्वेश्वरय्या इस अनुभूति को प्राय: दोहराया करते थे- ''हमारे संकल्प का काम स्वयं ही खिंचकर हमारे द्वार पर आता है, इसे मैंने जीवन में बीसियों बार अनुभव किया है, बशर्ते हमारा संकल्प जीवित और अदम्य हो।''

**–'सातों सुख' पुस्तक से**

# जनतंत्र का जन्म

* रामधारी सिंह 'दिनकर'

सदियों की ठण्डी बुझी राख सुगबुगा उठी,
मिट्टी सोने का ताज पहन इठलाती है
दो राह, समय के रथ का घर्घर नाद सुनो,
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।
जनता? हां, मिट्टी की अबोध मूरतें वही
जाड़े-पाले की कसक सदा सहने वाली,
जब अंग-अंग में लगे सांप हों चूस रहे,
तब भी न कभी मुंह खोल दर्द कहने वाली।
लेकिन, होता भूडोल, बवंडर उठते हैं,
जनता जब कोपाकुल हो भृकुटि चढ़ाती है,
दो राह, समय के रथ का घर्घर नाद सुनो,
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।
हुंकारों से महलों की नींव उखड़ जाती,
सांसों के बल से ताजा हवा में उड़ता है,
जनता की रोके राह समय में ताब कहां?
वह जिधर चाहती, काल उधर ही मुड़ता है।
सबसे विराट जनतंत्र का आ पहुंचा,
तैंतीस कोटि-हित सिंहासन तैयार करो,
अभिषेक आज राजा का नहीं, प्रजा का है
तैंतीस कोटि जनता के सिर पर मुकुट धरो।
आरती लिए तू किसे ढूंढता है मूरख,
मंदिरों, राजप्रसादों में तहखानों में,
देखता कहीं सड़कों पर मिट्टी तोड़ रहे,
देवता मिलेंगे खेतों में खलिहानों में।
फावड़े और हल राजदण्ड बनने को हैं,
धूसरता सोने से शृंगार सजाती है,
दो राह, समय के रथ का घर्घर नाद सुनो
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।

# परिवार

* सारिका चोपड़ा

चार दिनों का मेला है परिवार,
मिलने बिछड़ने का ठेला है परिवार,
कभी अमावस की अंधेरी रात है परिवार,
तो... कभी चांद तारों की बारात है परिवार॥
गंगा के किनारे मीठे जल और
समन्दर खारे पानी का
संगम है परिवार॥
सुख-दुख तो धूप-छांव है
एक को आते हैं... दूसरे ले जाते हैं...
पर इससे परे...
एक खूबसूरत एहसास है परिवार।
जीवन में समायोजन आ जाए
तो वरदान है परिवार॥

–द्वारा माइक्रो फाइन कैमिकल्स
22, नैनिप्पा नैकन स्ट्रीट, चैन्नई

# गीत

* डॉ. राधेश्याम शुक्ल

पछुवां की बयार में कुछ इस तरह बहे,
हम न शहर के रहे, न गांव के रहे।

क्या सनक चढ़ी कि हम 'ज़मीन' छोड़कर
'आसमान' के लिए बहुत विकल हुए,
एक चकाचौंध को प्रकाश मानकर
हम जगर-मगर हुए चहल-पहल हुए।

चंदनों की खोज सर्पदंश बन गई,
हम न धूप के रहे न छांव के रहे।

प्यास सिर्फ प्यास के रफ्तार हो गए,
रेत की नदी के हम कगार हो गए,
तन लहर हुआ, भंवर में मन भटक गया,
खो के सहज रंग हम निखार हो गए।

'घाट' ठौर दे सका न 'घर' बिछुर गया,
हम न धार के रहे न नाव के रहे।

हम बिखर गए हैं स्वयं को समेटकर,
हो गए उदास, खुशी को लपेट कर,
सिर्फ चमत्कार की आशा लिए हुए,
जी रहे हैं पत्थरों को भेंट-भेंट कर।

बे-पता की चिट्ठियों-सी भटकनें मिलीं,
ठांव के रहे न हम कुठांव के रहे।

–392, एम.जी.ए., हिसार (हरियाणा)

# मेरे लिए

* पुष्पा त्रिपाठी 'पुष्प'

तुम्हें जान लेने का सुख
अनमोल है मेरे लिए
इसी इच्छा से तो जीवन की
टोकरी भर जाती है
फूलों से जीवन में, मेरे लिए।
ठुमरी की राग लय सा बनता
मिश्रित बातों का असर तुम्हारा
रागिनी सी ठंडक देती है मुझे
तब मैं शीत हो जाती हूं, क्योंकि
मन का खिलना...महकना
गुनगुनाता तुम्हारा सब
इच्छित भाव पर निर्भर है, मेरे लिए।
चांद का झूमर सजा है
खुले आकाश में विस्तार
और उस झूमर की चांदनी
में छिपा है टिमटिमाटा आस
अहसास मध्यम स्याह में
जो जलता है जुगनुओं की तरह ही
उड़कर बैठ जाती है अक्सर
मेरे स्वर्ण से हाथों पर गुदगुदाती हुई
ये सुखद अनुभूति है
धीमी सहमी रोशनी में, मेरे लिए।
यह सुकून जानती हूं मैं
क्योंकि तन्वी बन बैठी हूं अब
दिन-रात की तालिका में
तेजस्विता का अधिकार लिए
द्विगुणित स्नेह निलय में
वर्चस्व तुम्हारा पाना
शांतिमय...गांभीर्य से, मेरे लिए।

–बी/701, जैसमीन टॉवर
वसंत विहार, नियर वसंत विहार स्कूल
थाने-400607 (महाराष्ट्र)

# हम तो बस खिलौने हैं

* नरेश कुमार 'उदास'

मैं तो इतना जानता हूं, सिर्फ यही मानता हूं।
कि, हम भगवान के हाथों बनाएं खिलौने हैं बस।
वह हमें नचाता है, आपस में मिलाता है
एक-दूसरे से कभी जुदा भी कर देता है।
हम जिसे जानते नहीं उसे पल भर में अपना मान लेते हैं।
कोई अजनबी होकर भी मन के बेहद करीब चला आता है।
और मन का मीत बन जाता है।
भगवान ही हमें एक-दूसरे से मिलाता है
जुदा भी करता है हम मिलते है तो खुश होते हैं
जुदा होते हैं तो रोते हैं, तड़फते हैं।
यह सब उसी का खेल है, उसी के बनाए मेल है।
हम तो उस के इशारों पर नाचते रहते हैं।

–सी.एस.आई.आर., एच.बी.टी.
पालमपुर-176061 (हि.प्र.)

# देश वंदना

❋ संतोष कुमार साहू

इस मिट्टी पर जन्म लिया है, अन्न यहां का खाते हो,
वंदे मातरम् कहने से फिर पीछे क्यों हट जाते हो॥
गंगाजल भी उसी खुदा का जिसके हज को जाते हो।
आबे जम जम पीकर तुम भी, क्या पावन हो पाते हो॥
हमने तुमको अपना माना दिल में भी स्थान दिया।
लेकिन तुमने गैरों से भी बड़ा घिनौना काम किया॥
नहीं चाहिए अफजल अजमल जो कि क्रूर व्यवहार करें।
मुझे चाहिए संत कबीरा, सांईं सा उपकार करें॥
रोज रोज ये फतवे देकर, क्यों आतंक फैलाते हो।
देशद्रोहियों गद्दारों क्यों मां का दूध लजाते हो॥

—रापटगंज जालौन-285123 (उ.प्र.)

# मातृभूमि की रक्षा

❋ कृपाशंकर शर्मा 'अचूक'

मातृभूमि की रक्षा का, वरदान दे दो,
इतना सा मुझको मेरे, भगवान दे दो।
स्वप्नों से सुन्दर हो मेरा देश सुहाना,
कदम-कदम से मिले कदम, जाना पहचाना।
मधुर वचन हों अधरों पर, मुस्कान दे दो,
मातृभूमि की रक्षा का, वरदान दे दो।
सभी ओर सुख-चैन शांति की हरियाली हो,
सुदृढ़ और सुवासित यहां की हर डाली हो।
दसों दिशायें गुंजित हों, मधुरगान दे दो,
मातृभूमि की रक्षा का, वरदान दे दो।
मां के अमर सपूतों को हम भूल न जावें,
नहीं कभी मिथ्या के आगे शीश झुकावें।
कर्मवीर ही बनें, कर्म का ज्ञान दे दो,
मातृभूमि की रक्षा का, वरदान दे दो।

—38-ए, विजयनगर, करतारपुरा,
जयपुर-302006 (राजस्थान)

# ऐसा भी दिन आएगा

❋ मनोज जैन

हाथ मलेगा शीश धुनेगा,
रह रहकर पछताएगा।
ऐसा भी दिन पाएगा।
बचपन बीता खेलकूद में
उमर कटी नादानी में।
डूब चली कागज की किश्ती,
फिर से गहरे पानी में।
पूरा जोर लगाकर भी क्या
अपनी नाव बचाएगा।
ऐसा भी दिन आएगा।
काम बहुत से करने को थे
उन्हें बाबरे भूल गया।
वशीभूत होकर माया के
आठ मदों में फूल गया।
उलझी कड़ियां अंत समय में
तू कैसे सुलझाएगा।
ऐसा भी दिन आएगा।
पूरा जीवन बीत गया कब,
कीमत तूने आंकी है।
आया भी था एकाकी तू
जाना भी एकाकी है।
साथ चलेगी तेरी करनी
शेष पड़ा रह जाएगा।
ऐसा भी दिन आएगा।
कर दे कमरा खाली तन का
कर तैयारी चलने की।
सूखी लकड़ी राह निहारे
पागले तेरे जलने की।
अकड़ी काया लेकर कैसे
अपनी अकड़ दिखाएगा।
ऐसा भी दिन आएगा।

—सी-5/13, इन्दिरा कॉलोनी
बाग उमराव दुल्हा, भोपाल-10 (म.प्र.)

# दर्द

❋ अर्चना ठाकुर

यादों का एक हिस्सा
चुभता है पलकों तले
रह रहकर रिस्ता है लहू उससे
रातों की ओट लिए
कभी बह जाता है खारे पानी की तरह
कभी गटक जाता हैं रूंधा गला उसे
कभी कदमों में भार सा
परछाई बन लिपट जाता है मुझसे
कभी दर्द की स्याही में डूबा
कागज में उतर जाता है शब्द से॥

—तेजपुर, सोनितपुर, असम

# बे पेंदे के लोटे

❋ ओम उपाध्याय

यहां जीवन बड़ा बेगैरत है
न तुझे हैरत है न मुझे हैरत है
आत्म सम्मान का भी यहां बड़ा टोटा
तू भी बे पेंदे का लोटा मैं भी बे पेंदे का लोटा
पता नहीं उसने हमें कितनी बार बेचा
न तुने कभी सोचा, न मैंने कभी सोचा
लुच्चे लफंगों की दुनिया में लुटने से
न तू बचा, न मैं बचा
जिन्होंने जिंदगी जी ली वे फायदे में रहे
अब न कानून रहे न कायदे रहे
भलमन साहत, की भेल क्या खाई
न तूछे पची न मुझे पची
इस बार बहुत रखना ध्यान
तेरा भी कल्याण मेरा भी कल्याण।

—167, ग्रेटर वैशाली, इन्दौर-9 (म.प्र.)

# कर्मवीर

❋ संदीप फाफरिया 'सृजन'

मेहनत की सम्मान करो, तुम मेहनत में भगवान।
कर्मवीर बनकर ही जियों, ये कहता गीता ज्ञान॥
कर्मवीर ही इस धरती को देते है हर पल नव रूप।
कर्मवीर के आगे नतमस्तक होते सारे जग के भूप।
कर्मवीर जीवन में अपने पता है हर पल सम्मान॥
पर्वत से नदियों को निकाली मेहनत करने वालों ने।
धरा पे खो दी ताल-तलैया, मेहनत के मतवालों ने।
किसने बनाई मूरत मेरी उसे ढूंढता खुद भगवान॥
अन्न, धन्न, लक्ष्मी इस धरती पर मेहनत से सब पाते है।
कारखानों में श्रमिक की मेहनत को सब शीष नवाते है।
मजदूर, किसानों की मेहनत पर करे गर्व है हिन्दुस्तान॥

—ए-99, व्ही.डी. मार्केट, उज्जैन (म.प्र.)

# आत्म सत्ता से बड़ी कोई सत्ता नहीं है

हुकमचंद सोगानी

**प्रकृति ने मनुष्य का शरीर इतना संतुलित इसलिए बनाया है कि वह अपनी जिंदगी में संतुलन बनाए रखने के लिए मुश्किलों का डटकर मुकाबला कर सके। इस दृष्टि से मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है तो फिर वह परिस्थितियों के बहाने निकृष्ट कार्य क्यों करे? मनुष्य को चाहिए कि वह अपने हाथों को बुरे कामों से सदैव निर्लिप्त रखे। संसार की समस्त सुविधाओं का उपभोग उस मनुष्य के लिए है जो परमसत्ता के प्रति आस्थावान है।**

आदमी बहुत दूर की सोचता है। वह सात पुश्तों की सुरक्षा निश्चित करने में जुटा रहता है। जबकि जीवन क्षणभंगुर है। तमाम तामझाम यहीं पड़ा रह जाने वाला है। फिर भी आदमी अपनी जिंदगी का सिक्का जमाने के लिए भरपूर कोशिशें करता है। यही उसकी फितरत है। इस तारतम्य में कुछ लोगों ने भ्रष्टाचार की राहें पकड़ ली हैं। जबकि कई लोग हाथों में श्रीफल लेकर मंदिर के द्वार पर खड़े हैं। फिर भी उनके चेहरों पर कितने मुखौटे जड़े हैं। आदमी की मुस्कराहट का रहस्य कौन जान सकता है? कतिपय मुस्कराहटें जब छलती हैं तो छाती जलती है। यह माटी का इंसान सदियों से अपने अच्छे-बुरे करतब दिखाता रहा है। खुद नाचता रहा है तो कभी किसी को नचाता रहा है। इंसान की जिंदगी का हर दिन इसी तरह गुजरता रहा है। लेकिन प्रभु की यह लीला है कि जिस माटी के खिलौने से बचपन में इंसान खेला है। उसी माटी में उसका अस्तित्व फना हुआ है। जिस माटी के दीप को संजोकर आदमी ने दीवाली मनाई है। उसके उजाले की सीख उसने कितनी अपनाई है?

आदमी जब बुरे कामों में फंसकर हारता है तो वह बुरी तरह हांफता है। फिर भी वह अपनी जीत के झूठे किस्से फांकता है। बेशक, जो आत्मसत्ता को जानता है। वह जीवन संघर्ष में जरूर जीतता है। आत्मसत्ता से बड़ी कोई सत्ता नहीं है। आत्मसत्ता को हरा सके ऐसा कोई पत्ता नहीं है आत्मसत्ता से जुड़कर आदमी को अपने जीवन में जो खुशियां मिलती है, उनका वर्णन शब्दों से संभव नहीं है। आत्मसत्ता और परमसत्ता में फर्क नहीं है। इन्हें जुदा दर्शाने के लिए हमारे पास कोई दमदार तर्क नहीं हैं किसी की खामियों के प्रति मुंह खोलने से पेशेवर इंसान को अपना मन टटोलना चाहिए। किसी पापी को पहला पत्थर वही मार सकता है, जिसने कोई पाप नहीं किया हो। आदमी के हिसाब में रद्दोबदल हो सकता है। कुदरत की किताब में लिखा हिसाब साफ होता है। रिश्तों, मित्रों और जज्बातों से कोई अपने पाप नहीं धो सकता है। पाप मुक्त होने के लिए धर्ममुक्त होना पड़ता है। परमसत्ता का यही संदेश है।

यदि कोई अपराध करे तो वह सजा से कैसे बच सकता है? सजा उसे उसका दिल भी देता है। आदमी को ऐसी कौन-सी मजबूरियां घेर लेती हैं कि वह अपराधों का दामन थामकर जिंदगी तबाह कर लेता है। अपने जमीर को गिरवी रखने वाला आदमी गैरतमंद नहीं हो सकता है। कर्तव्य परायण होकर ही आदमी का वजूद कायम रह सकता है। पुरखों के लिखे शब्दों के प्रति कोई कैसे मुकर सकता है? किसी और को आगे करके जब कोई आदमी अपने को बचा लेता है तो क्या उसका यह बचाव वाजिब होता है? सही राहों पर चलकर ही मानव जीवन सार्थक सिद्ध होता है।

जब मनुष्य महान बन सकता है तो फिर वह अधम क्यों बनें? धर्म की राहें खुली हैं तो फिर वह अधर्म के शूल भरे पथ पर क्यों चले। विवेकशील होते हुए भी मनुष्य अविवेक के उदाहरण क्यों प्रस्तुत करे? जिंदगी के उसूलों से हटकर टूट कर क्यों जिए? प्रकृति ने मनुष्य का शरीर इतना संतुलित इसलिए बनाया है कि वह अपनी जिंदगी में संतुलन बनाए रखने के लिए मुश्किलों का डटकर मुकाबला कर सके। इस दृष्टि से मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है तो फिर वह परिस्थितियों के बहाने निकृष्ट कार्य क्यों करे? मनुष्य को चाहिए कि वह अपने हाथों को बुरे कामों से सदैव निर्लिप्त रखे। संसार की समस्त सुविधाओं का उपभोग उस मनुष्य के लिए है जो परमसत्ता के प्रति आस्थावान है। परमेश्वर की कृपादृष्टि का वह पात्र होता है।

इंसान हाथी को वश में कर सकता है तो बुराइयों के अधीन क्यों होता है? अपने क्रांतिकारी विचारों की ऊर्जा से बुराइयों की जड़े उखाड़ फेंकने वाले इंसान का जीवन अनुकरणीय होता है। दुनिया में कई लोगों के पास अथाह संपत्ति नहीं है। लेकिन उन्होंने मानवता के हित में ऐसे अपूर्व कार्य संपादित किये हैं कि वे संसार में चिरस्मरणीय हो गए हैं। आदमी जब आंतरिक शक्ति और विवेक से परमसत्ता के स्वरूप को समझ लेता है तो फिर वह अजेय हो जाता है।

**–फ्लैट नं.-201, महावीर मार्केट**
**नई पेठ, उज्जैन-456006 (म.प्र.)**

# शिव देवता भी हैं, दर्शन भी

हरिओम शास्त्री

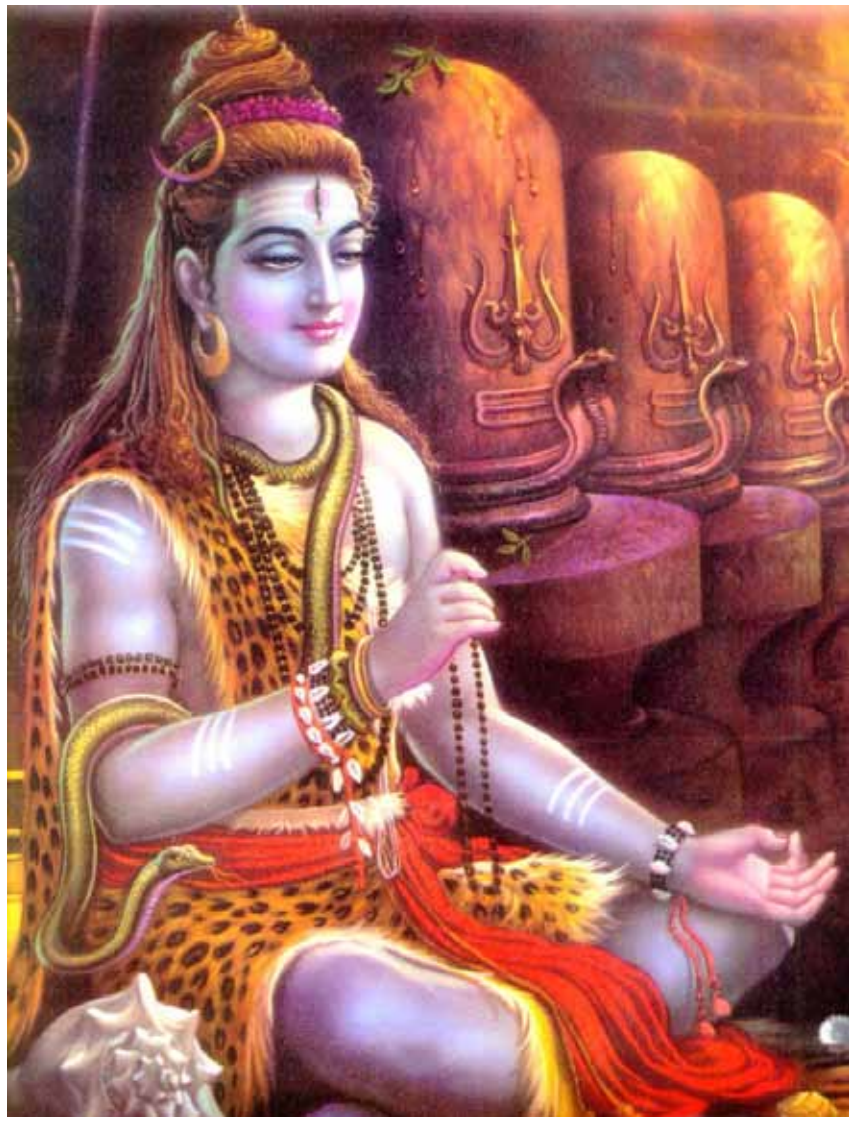

**प्रश्न यह है कि शिव एक दर्शन है या एक देवता हैं या कोई विराट पुरुष हैं? शिव साहित्य का अध्ययन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि शिव एक विराट व्यक्तित्व है, जिनका जीवन एक दर्शन है और जब उनके व्यक्तित्व के साथ उनके दर्शन का योग हो जाता है, तो वे देवता स्वरूप बन जाते हैं।**

हमारे देश में कश्मीर से कन्याकुमारी तक सबसे ज्यादा मंदिर भगवान शिव के पाए जाते हैं। शिव के भक्तों की संख्या बहुत है। इसका कारण इस मान्यता का प्रचलित होना है कि वे बहुत जल्दी प्रसन्न हो जाने वाले देवता हैं। इसीलिए उन्हें आशुतोष कहते हैं। आशुतोष के कारण ही भक्त उन्हें प्यार से भोले बाबा भी कहते हैं। जबकि जो परम सत्ता ईश्वर है, उसके लिए भोले शब्द का प्रयोग बहुत उपयुक्त नहीं लगता।

अब प्रश्न यह है कि शिव एक दर्शन है या एक देवता हैं या कोई विराट पुरुष हैं? शिव साहित्य का अध्ययन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि शिव एक विराट व्यक्तित्व है, जिनका जीवन एक दर्शन है और जब उनके व्यक्तित्व के साथ उनके दर्शन का योग हो जाता है, तो वे देवता स्वरूप बन जाते हैं।

शिव की जीवनचर्या और परिवार में सांप, मोर, चूहा, बैल और शेर जैसे जीव-जंतुओं का विशेष स्थान है। एक-दूसरे के शत्रु होने पर भी ये जीव शिव परिवार के सदस्य हैं और एक साथ प्रेमपूर्वक रहते हैं। इस परिवार में शिव, पार्वती, गणेश, कार्तिक, वृषभ और सांप आदि सभी पूजनीय हैं। इसका कारण यह है कि शिव एक देवता हैं अतः उनका परिवार भी देवतुल्य हुआ।

यह माना जाता है कि जीवन के सत, रज, तम आदि गुण इस ब्रह्मांड के विशेष नियमों के अनुसार किसी एक महाकेंद्र से उत्सर्जित होते हैं और ब्रह्मांड के समस्त तत्वों को प्रभावित करते हैं। वह महाकेंद्र और कुछ नहीं, स्वयं शिव ही हैं। ब्रह्मांड के महाकेंद्र होने की इस मान्यता से उनके देवता तत्व की पुष्टि होती है यानी उन्हें इसीलिए देवता माना जाता है। इस महाकेंद्र से निकलने वाली प्रत्येक अभिव्यक्ति को देवता कहकर पुकारा गया है। यह भी कहा जाता है कि शिव तो सभी तत्वों की समष्टि का नाम है। इसलिए उन्हें महादेव भी कहा जाता है।

हिन्दू परम्परा में शिव के जो विविध रूप मिलते हैं, उनमें उनका एक तांत्रिक रूप भी है। हालांकि विभिन्न प्राचीन ग्रंथों में शिव के तांत्रिक होने का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। इसलिए अधिक संभावना इस बात की है कि उनके तांत्रिक भक्त खुद धतूरा तथा भांग आदि जिन मादक पदार्थों का भोग लगा देते थे। इसी से शिव को भी तांत्रिक मानने की परम्परा चल पड़ी।

भगवान शिव से जुड़ा शैव दर्शन असल में प्रकृतिवादी दर्शन है। प्रकृति का प्रथम कार्य है सृजन यानी निर्माण करना। प्रकृति के इस सृजन या निर्माण की प्रक्रिया को शिव भी कहते हैं। प्रकृति का दूसरा कार्य विनाश करना है। विनाश को रुद्र भी कहा जाता है। शिव अपने रुद्र अवतार में अपने गणों के साथ तांडव नृत्य कर संसार को इस बारे में चेताते हैं कि सृजन के साथ विनाश अवश्यंभावी है।

शैव दर्शन के तीन तत्व हैं- पशु, पाश तथा पति। पशु का अर्थ है जीवात्मा या प्राणिमात्र। पाश का अर्थ है बंधन। पति का अर्थ है शिव। इस दर्शन के प्रमुख सम्प्रदाय हैं योग, चर्या, क्रियाकलाप और कषाय। शैव दर्शन का विस्तार कश्यप ऋषि ने कश्मीर में किया। इसी आधार पर भगवान शंकर के पांच मुख माने गए हैं जिनके नाम हैं- नामदेव, कालाग्नि, दक्षिणेश्वर, ईशान और कल्याण सुंदरम्।

शिव की विशेष स्तुति से जुड़ी रात्रि को शिवरात्रि कहा जाता है। शिवरात्रि का अर्थ महानिशा अथवा गहनरात्रि। माना जाता है कि इस दिन शिव ज्योतिर्लिंग (काशी विश्वनाथ) पुष्ट अर्थात् पूर्ण हुआ था। शिव पुराण के अनुसार शिव का विवाह भी महाशिवरात्रि के दिन ही हुआ था। मुख्यतः शिव के दो रूप हैं। उनका एक दार्शनिक रूप है जिसे 'एकेश्वर' कहते हैं। दूसरा रूप भक्ति के स्तर पर है जिसे मंगलकारी और कल्याणकारी कह कर 'शिव' ही कहा गया है। ●

# जीवन का आधार है प्रेम

मंजुला जैन

हाल ही में शादी की 35वीं सालगिरह पर एक बार पुन: प्रेम और प्रेरणा की शक्ति से रू-ब-रू होने का मौका मिला। जीवन में प्रेम संजीवनी बूटी के समान है। इसके बिना जीवन अधूरा है। प्रेम एक व्यापक शब्द है जिसे कोरा देह के अधीन समझना उचित नहीं है। देह निमित्त है मंजिल नहीं। कई बार देह प्राप्त कर भी हम उससे प्रेम नहीं कर पाते। इसलिए प्रेम एक यात्रा है, लंबी यात्रा, पड़ाव नहीं।

प्रेम के पीछे जब तक कोई मूल्य, आदर्श, नैतिकता और पारदर्शिता नहीं है तो यह एक तरह का छल है, पाखंड है, धोखा है, खुद से भी और उससे भी जिससे हम प्रेम करते हैं। प्रेम एक उदात्त भाव है। मनुष्य की अच्छाइयों और सद्इच्छाओं का एक फलन है। मेरी दृष्टि में प्रेम गृहस्थ जीवन का आधार है, उसमें दायित्व और कर्तव्य बोध अधिक है। चाहे घर गृहस्थी हो या सामाजिक जीवन- हर जगह प्रेम के बिना अधूरापन है। क्योंकि प्रेम वृक्ष की छांह है, पानी की बूंद है। चिराग की रोशनी है। एक सहारा है, एक विश्वास है, एक उम्मीद है। आज भौतिकता की तेज आंधी में प्रेम का वास्तविक स्वरूप ही धवस्त होता जा रहा है।

बात चाहे सेवा की हो या परोपकार की हो। बात चाहे रिश्तों की हो या जीवन मूल्यों की- प्रेम पहली शर्त है। जिसके दिल में प्रेम नहीं है वह एक सार्थक एवं उद्देश्यपूर्ण जीवन कैसे जी सकता है? प्रेम क्या है? एक दार्शनिक सवाल है। यह जितना लौकिक है उतना पारलौकिक भी है। इसीलिए टॉलस्टाय ने कहा है, ''प्रेम स्वर्ग का रास्ता है।'' बुद्ध का कथन है, ''प्रेम इंसानियत का एक फूल है और प्रेम उसका मधु।'' रामकृष्ण परमहंस ने कहा है, ''प्रेम संसार की ज्योति है।'' विक्टर ह्यूगों का कहना है, ''जीवन एक फल है और प्रेम उसका मधु।'' रामकृष्ण परमहंस ने कहा है, ''प्रेम अमरता का समुंदर है।'' कबीर का कथन है, ''जिस घर में प्रेम नहीं, उसे मरघट समझ बिन प्राण के सांस लेने वाली लुहार की धौंकनी।''

अलग-अलग शब्दों में सभी महापुरुषों ने प्रेम का बखान किया है। वास्तव में प्रेम मानव-जाति की बुनियाद है। प्रेम ऐसा चुम्बक है, जो सबको अपनी ओर खींच लेता है। जिसके हृदय में प्रेम है, उसके लिए सब अपने हैं। भारतीय संस्कृति में तो सारी पृथ्वी को एक कुटुम्ब माना गया है- 'वसुधैव कुटुम्बकम्।'

जो सबकों प्रेम करता है, उससे बड़ा दौलतमंद कोई नहीं हो सकता। वह दूसरे के दिल में ऊंची भावना पैदा कर देता है। आप जानते हैं, आदमी को भूमि से कितना मोह होता है। कौरवों ने कहा था कि हम पाण्डवों को सुई की नोक के बराबर भी जमीन नहीं देंगे, लेकिन विनोबा के प्रेम ने लाखों एकड़-भूमि इकट्ठी करा दी। उन्होंने लोगों से यह नहीं कहा कि मुझे जमीन दो। नहीं दोगे तो कानून से या जोर-जबर्दस्ती से छिनवा दूंगा। जिसका हृदय प्रेम से सराबोर हो, वह ऐसी भाषा कैसे बोल सकता था।

जिसका हृदय निर्मल है, उसी में ऐसे महान प्रेम का निवास रहता है। वैसे तो रोज प्रेम करते हैं, अपने बच्चों के, अपने संबंधियों के, अपने मित्रों के प्रति प्रेम का व्यवहार करते हैं, लेकिन बारीकी से देखा तो वह असली प्रेम नहीं है। हमारे प्रेम के कर्तव्य की थोड़ी-बहुत भावना रहती है, पर साथ ही यह स्वार्थ भी कि हमारे बच्चे बड़े होकर बुढ़ापे का सहारा बनेंगे। सगे-संबंधी मुसीबत में काम आयेंगे। अगर हमें यह भरोसा हो जाए कि हमारा काम दूसरों के बिना भी चल जायेगा तो सच मानिए, हमारे प्रेम का बर्तन बहुत-कुछ खाली हो जायेगा। ऐसा प्रेम हमारे जीवन में छोटी-मोटी सुविधाएं पैदा कर सकता है, पर दुनिया को बांध नहीं सकता।

असली प्रेम तो वह है जिसमें किसी प्रकार की बदले की भावना न हो। इतना ही नहीं, उसमें विरोधी के लिए भी जगह हो। गर्मी से व्याकुल होकर हम जाने कितनी बार सूरज को कोसते हैं, पर सूरज कभी हम पर नाराजगी दिखाता है? हम धरती को रोज पैरों से दबाते हुए चलते हैं, पर वह कभी गुस्सा होती है? जरा गरम हवा आती है तो हम कहते हैं- 'मार डाला कमबख़्त ने।' हमारी गाली का हवा कभी बुरा मानती है? यदि गुस्सा होकर सूरज धूप और रोशनी न दे, धरती अन्न न दे, हवा प्राण न दे, तो सोचिए, हम लोगों की क्या हालत होगी। पर दुनिया उन्हें कितना ही भला-बुरा कहे, वे अपने धर्म को नहीं छोड़ सकते। उनके प्रेम में तनिक भी अंतर नहीं पड़ सकता, क्योंकि उनके प्रेम के पीछे किसी प्रकार का स्वार्थ नहीं है। वे प्रेम इसलिए देते हैं कि बिना दिये रह नहीं सकते। ●

# प्रसन्नता ही प्रसन्नता

हकीम लुकमान बचपन में गुलाम थे। एक दिन उनके स्वामी ने एक ककड़ी खानी चाही। मुंह में लगते ही जान पड़ा कि ककड़ी अत्यंत कड़वी है। स्वामी ने ककड़ी लुकमान की ओर बढ़ा दी-'ले, इसे तू खा ले!' लुकमान ने ककड़ी ले ली और बिना मुंह बिचकाये वे उसे खा गये। लुकमान के स्वामी ने समझा था कि इतनी कड़वी ककड़ी कोई खा नहीं सकता।

लुकमान इसे फेंक देगा परन्तु जब लुकमान ने पूरी ककड़ी खा ली तो वह आश्चर्यचकित होकर पूछने लगा-'तू इतनी कड़वी कैसे खा सका।'

लुकमान बोला-'मेरे उदार स्वामी! आप मुझे प्रतिदिन स्वादिष्ट पदार्थ प्रेमपूर्वक देते हैं। आपके द्वारा प्राप्त अनेक प्रकार का सुख मैं भोगता हूं। ऐसी अवस्था में एक दिन आपके हाथ से कड़वी ककड़ी मुझे मिली तो उसे मैं क्यों आनन्दपूर्वक नहीं खाऊं।' वह व्यक्ति समझदार, दयालु और धर्मात्मा था। उसने लुकमान का आदर किया। वह बोला-'तुमने मुझे उपदेश दिया है कि जो परमात्मा हमें अनेक प्रकार के सुख देता है, उसी के हाथ से यदि कभी दु:ख भी आये तो उस दु:ख को प्रसन्नतापूर्वक भोग लेना चाहिए। आज से तुम गुलाम नहीं रहे।

**-मुकेश अग्रवाल, दिल्ली**

# अपना विश्वास ही हमें आगे बढ़ाएगा

रमेश भाई ओझा

एक बच्चा किसी बुजुर्ग के साथ पार्क में खेल रहा था। उसने बच्चे से कहा- मैं तुम्हारी आंख में पट्टी बांध देता हूं। फिर तुम दौड़कर मुझे पकड़ना। बच्चा खुशी खुशी तैयार हो गया। लेकिन सोचिए, अगर कोई अपरिचित उससे ऐसा कहता तो क्या वह राजी हो जाता?

यह जीवन विश्वास से ही चलता है। हर संबंध विश्वास पर ही खड़ा है। संबंध चाहे गुरु-शिष्य का हो या भक्त-भगवान का, मालिक-नौकर का हो या भाई-भाई और पति-पत्नी का। विश्वास पैदा करने के लिए कोई शर्त नहीं होती। यह बिना रस्सी का बंधन है। श्रद्धा और प्रेम से विश्वास की जड़ें मजबूत होती हैं। आज यदि माता-पिता बच्चों में विश्वास न रखें, हमेशा शक की नजर से देखें तो बच्चे गलत करना शुरू कर देंगे। व्यापार में भाई-भाई पर शक करे तो क्या व्यापार आगे बढ़ेगा, भाई उन्नति की जगह भाई पर शक करने में समय गुजार देगा। यदि पति पत्नी पर, पत्नी पति पर शक करे तो स्वर्ग को नरक बनने में जरा भी वक्त नहीं लगेगा। सभी में स्वार्थ, लोभ, मोह की प्रवृत्तियां हैं। उनको विश्वास के आधार पर ही सही किया जा सकता है।

शक से तो बुनियाद हिल जायेगी। हमें तो बुनियाद पक्की करनी है। विश्वास कैसे बढ़ेगा, सबसे पहले तो हमें स्वयं अपने आप पर विश्वास करना है। यदि हमें अपने पर विश्वास नहीं तो हम किसी पर विश्वास कैसे करेंगे? अपने अंदर श्रद्धा, प्रेम और विश्वास जैसे गुण पैदा करने हैं। हमारा अपना विश्वास ही हमें आगे बढ़ायेगा। विश्वास और अविश्वास जीव की एक आदत है। हमें आंखें बंद करके नहीं चलना है। भगवान ने जीवन में जो समय दिया है उसे बेकार की उधेड़बुन में, तर्क-वितर्क में व्यर्थ न करें, इससे कुछ हासिल नहीं होगा। विश्वास और प्रेम को बढ़ाते चलें। फिर लाभ ही लाभ है। अनमोल समय और शक्ति का सदुपयोग करने पर आपके जीवन में उमंग, आनंद बढ़ जायेगा। किसी भी कार्य को करने में कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ेगा। कठिनाइयां आयेंगी जरूर पर आपका विश्वास आपका रास्ता आसन कर देगा। परमात्मा भी उसी को देखते हैं जिसको उनमें पूर्ण विश्वास रहता है। इधर-उधर न भटकें एवं निराशा को पास न आने दें। निराशा तो जीते जी मौत है। वह जीवन में जहर घोल देती है। आशावादी बनें। प्रभु के दिए जीवन को सार्थक बनाएं। विश्वास का, प्रेम का प्रकाश अपने चारों तरफ फैलाते चलें। धन का लोभ एक कोढ़ के समान है। इससे बचना चाहिए। लोभी व्यक्ति जीवन-मरण से मुक्ति नहीं होता है। इस कोढ़ से मुक्त होने का एक ही साधन है वह यह है कि मनुष्य अपने-पराए का भाव हृदय स निकालकर जरूरतमंद लोगों की सेवा करे। ऐसा नहीं करने वाला व्यक्ति मनुष्य के रूप में पशु के समान है। दुनिया में हमारी संस्कृति की एक अलग पहचान है। परमार्थ का भाव हमारे भीतर कूट-कूट कर भरा है। अगर हम उसे भूल जायेंगे तो फिर परमार्थ कौन करेगा? भारतवर्ष में एक से बढ़कर एक ऋषि-महात्मा हुए हैं जिन्होंने परमार्थ के लिए अपना सब कुछ अर्पण कर दिया।

केवल अपने लिए जीन तो राक्षसी पद्धति है। बल, बुद्धि और विद्या को दूसरे के हित में लगाएं। इससे कार्य करने से मनुष्य सामाजिक बुराइयों से बचता है। औरों के हित का कार्य घर से प्रारंभ किया जा सकता है। परिवार में सबको एक भाव से देखें। बेटी और बहू में अंतर न समझें। जो व्यक्ति कुछ लेता नहीं है, उसे ही लोग देना चाहते हैं। संतों को लोग इसी कारण देना चाहते हैं।

लेने को नहीं बल्कि देने की आदत डालने से ही इंसान को सुख मिलता है। लेना जड़ता है और देना चेतना है। ●

# मां का कर्ज

एक दिन ईश्वरचंद विद्यासागर कहीं बाहर जाने को थे, तभी कोई याचक आ गया। वह देखने में बड़ा दीन-हीन लग रहा था।

विद्यासागर भीतर गए और उन्होंने अपनी मां से कहा, 'मां, एक जरूरतमंद आदमी बाहर खड़ा है। हमें उसकी सहायता करनी चाहिए।'

मां ने कहा, 'तुम्हें तो मालूम है कि हमारे पास एक भी पैसा नहीं है।'

विद्यासागर मां के कंगन की ओर देखते हुए बोले, 'मां, तुम यह कंगन मुझे दे दो। बड़ा होकर मैं तुम्हारा कर्ज उतार दूंगा।'

मां ने कंगन दे दिया। विद्यासागर ने कंगन बेचकर उस याचक की सहायता की। बात आई-गई हो गई। पर बड़े होकर विद्यासागर मां के उस कर्ज को नहीं भूले।

जब वह समर्थ हुए तो उन्होंने एक दिन मां से कहा, 'मां, आज मैं तुम्हारे लिए कंगन बनवाना चाहता हूं। तुम्हें याद है मैंने बचपन में एक बार तुमसे बतौर कर्ज तुम्हारे कंगन लिए थे।'

इस पर मां ने कहा, 'बेटा, देश के अनेक लोग अज्ञान के गड्ढे में पड़े हैं। उनमें ज्ञान का प्रकाश फैलाने के लिए जितने हो सके विद्यालय खुलवाओ। देश के अनेक भाई-बहन दवा के अभाव में बिना मौत के मर जाते हैं, उनके लिए अस्पताल खुलवाओ। बेरोजगारों के लिए रोजी-रोटी का प्रबंध करो।'

मां की यह बात सुनकर विद्यासागर ने समाज सेवा का संकल्प ले लिया और आजीवन उसे तन्मयता से निभाते रहे।

**-राहुल फूलफगर**

# नये संकल्प के साथ मनाएं स्वतन्त्रता दिवस

डॉ. आनंद प्रकाश त्रिपाठी

पंद्रह अगस्त 1947 भारतीय इतिहास के स्वर्णाक्षरों में अंकित है। लम्बी दासता के बाद अनगिनत क्रान्तिकारियों के त्याग और बलिदान से स्वतंत्रता के विहान ने भारत भूमि पर दस्तक दी थी। एक तरफ जहां चन्द्रशेखर आजाद, असफाक उल्लाखां, वीर कुंवर सिंह, भगतसिंह आदि हंसते-हंसते आजादी के परवाने हो गये तो दूसरी तरफ गोपालकृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय आदि ने अदम्य जीवटता के साथ अंग्रेजों से लोहा लिया था। 'आजादी हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।' हम इसे लेकर रहेगें, तिलक के ये शब्द अंग्रेजों को चुनौती देते थे। साइमन कमीशन के बहिष्कार के समय लाला लाजपत राय पर अंग्रजों के जुल्मों सितम लाठीचार्ज के बाद भी उनके स्वर मुखरित हुए- 'मेरे शरीर पर पड़ी एक-एक लाठी की चोट ब्रिटिश साम्राज्य के लिए कफन साबित होगी'। कितना अदम्य उत्साह था, कितनी जीवटता थी और मातृभूमि के प्रति कितना प्रेम था कि मरते समय भी वे ब्रिटिश साम्राज्य के पतन की बात सोच रहे थे। गोखले ने तो लम्बे समय तक आजादी के संग्राम के नेतृत्व के लिए महात्मा गांधी के रूप में एक सुयोग्य शिष्य दिया, जिन्होंने सत्य और अहिंसा के रास्ते पर चलकर असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन , भारत छोडो आन्दोलन आदि के माध्यम से अंग्रेजों को भारत छोडने के लिए मजबूर कर दिया। गांधीजी ने पूरे विश्व को दिखा दिया कि अहिंसा की ताकत क्या होती है। लार्ड माउंटबेटन ने स्वयं गांधीजी के अहिंसा शक्ति की तारीफ करते हुए कहा था कि हमारे 50 हजार हथियारों से युक्त सिपाही एक तरफ और गांधी की अहिंसा एक तरफ, अन्तत: गांधी के अहिंसा की जीत हुई।

हम आजाद हो गये हमारे क्रान्तिकारियों ने आजाद भारत के लिए जो सुनहरा स्वप्न देखा था क्या वह स्वप्न साकार हुआ है? यह एक अहम प्रश्न है। क्या, क्रान्ति पुरोधाओं ने भ्रष्ट आजाद भारत की कल्पना की थी, क्या असुरक्षित महिलाओं वाले भारत की इच्छा की थी, क्या मौत को गले लगा रहे किसानों वाले भारत की कल्पना की थी, क्या हिंसक आक्रोश को व्यक्त करने वाले लोगों के देश की कल्पना की थी? शायद नहीं। गांधीजी ने तो अपने आन्दोलन असहयोग आन्दोलन के चौरीचौरा काण्ड के कारण हिंसक होने से इसलिए वापिस ले लिया था कि हमें हिंसा के द्वारा प्राप्त आजादी नहीं चाहिए। यदि राष्ट्रपिता बापू ने देश की आजादी के लिए अपने सफलतम आन्दोलन में हिंसा को

**स्वतंत्रता दिवस मनाते हुए जहां तिरंगा झण्डा फहरायें, क्रान्तिकारियों को याद करें वही यह संकल्प भी लें कि हम भारतीय है, भारतीय रहेंगें ओर अपने आचार व्यवहार से देश का मान-सम्मान बढायेंगें।**

स्थान नहीं दिया तो स्वतंत्र भारत में हिंसा क्यों? क्या आज के सत्ताधीश स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास से अनभिज्ञ है? क्या बापू की इच्छा का आदर करने का दायित्व उनका नहीं है। देश सेवा की शपथ लेने वाले ये नेता भ्रष्टाचार को क्यों बढावा देते हैं? क्यों हमारे नेता ए.राजा, दयानिधि मारन, पवन बंसल एवं अश्विनी कुमार बनते हैं? क्या गांधीजी ने आजादी के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर इसलिए किया था कि हम भ्रष्टतम दस देशों में अपना स्थान सुरक्षित करायें। हर 15 अगस्त को हम तिरंगा झण्डा फहराते है, क्रान्तिकारियों को याद करते हैं, लम्बे -चौड़े भाषण दे लेते है, और स्वतंत्रता दिवस को मनाने की औपचारिकता पूरी कर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। क्या यही हमारा कर्तव्य है? क्या आजाद देश के नागरिकों का यही दायित्व है? क्यों नहीं अपने पूर्वजों से सबक लेकर हम अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हैं? यदि भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि की तरह अपनी कुर्बानी नहीं दे सकते और गांधी की तरह सर्वस्व त्यागकर राष्ट्रहित का कार्य नहीं कर सकते किन्तु लाल बहादुर शास्त्री की तरह अपने परिवार के भरण पोषण के साथ निष्ठा और ईमानदारी से अपने कर्तव्य का तो निर्वाह कर सकते हैं। प्रत्येक पन्द्रह अगस्त को हमें कुछ संकल्प के साथ अपने दायित्व निर्वहन करने होंगे।

प्रत्येक भारतवासी को भारतीय कहलाने में गर्व की अनुभूति होनी चाहिए किन्तु दुर्भाग्य से प्रान्त, जिले, तहसील, गांव और परिवार तक अपने आपको सीमित करके हम विकृत मानसिकता का परिचय देते हैं। हमें यह सोचना चाहिए कि यदि भारतमाता नहीं रहेगी तो कौनसा प्रान्त, जिला परिवार का अस्तित्व रह पायेगा। असली आजादी तो उस दिन होगी जब देश का प्रत्येक नागरिक धर्म, वर्ग, नस्ल, एवं जाति के चक्कर से ऊपर उठकर अपने नाम के साथ उपनाम भारतीय लगायेगा। कुटिल राजनीतिज्ञ वोटों के लिए जनता को धर्म, जाति, सम्प्रदाय में बांटकर अपने स्वार्थ की पूर्ति करते हैं। ऐसे नेताओं का सामूहिक बहिष्कार जनता द्वारा किया जाना चाहिए जो देशवासियों को भारतीयता से अलग करते हों। अत: हम पहले भारतीय हैं। फिर और कुछ है, यह अहसास हमें होना चाहिए और यही हमारा प्रमुख दायित्व है।

देश का प्रत्येक व्यक्ति चाहता है। कोई भी बुराई नहीं चाहता । किन्तु विडम्बना यह है कि हर व्यक्ति अच्छाई दूसरों से चाहता है। जब स्वयं अच्छा बनने की बात आती है तो पीछे रह जाते है। हम यह तो चाहते हैं कि लोग सत्य बोले, अहिंसा के मार्ग पर चले किन्तु जब बात अपने लिए आती है तो पीछे हट जाते है, यही प्रत्येक समस्या का कारण है। अत: हमारा दायित्व है कि हम अच्छी बात अपने और अपने घर से शुरू करें संभवत: ऐसा करने में कोई बाधा नहीं है, यह हमारे अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत है। धीरे-धीरे हमारे कदम आगें बढ सकेंगें। पुन: आचार्य तुलसी याद आते हैं, जिन्होंने यह कहा था कि 'हम सुधरेगें, युग सुधरेगा।' अत: हम अपने सुधरने की बात सोचें तो धीरे-धीरे युग में बदलाव आयेगा।

स्वतंत्रता दिवस मनाते हुए जहां तिरंगा झण्डा फहरायें, क्रान्तिकारियों को याद करें वही यह संकल्प भी लें कि हम भारतीय है, भारतीय रहेंगें ओर अपने आचार व्यवहार से देश का मान-सम्मान बढायेंगें। एक सभ्य नागरिक एवं सुसंस्कृत देश भक्त के रूप में स्वयं जीवन यापन करेगें और दूसरों को भी ऐसा ही जीवन यापन के लिए प्रेरित करते रहेगें । पारदर्शिता और जवाबदेही हमारे जीवन का आधार होगी। बस इसी संकल्प की क्रियान्विति के साथ हम स्वतंत्रता दिवस का स्वागत करें।

**-निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय**
**जैन विश्वभारती संस्थान**
**लाडनूं-341306 ( राजस्थान )**

# शांति के साथ परिवार में कैसे जीएं

साध्वी राजीमती

हम जिस दुनिया में जी रहे हैं उसमें सभी लोग एक-दूसरे से अपेक्षा करते हैं कि वे शांत हों। सरसता भरे व्यवहार वाले हों, किन्तु सब शांत सरस नहीं होते। आश्चर्य तो इस बात का है कि हम स्वयं जैसा चाहते हैं वैसा नहीं जी पाते। बहुत बार हमारा मन छोटी बात को बड़ा बना लेता है, क्योंकि मन पहले से अशांत होता है। अशान्त मन परिपार्श्व में फैले अशांति के कीटाणुओं को जल्दी पकड़ता है। ये कीटाणु जितनी जल्दी अपनी हत्या करते हैं उतनी जल्दी औरों की नहीं करते।

पारिवारिक जीवन में कुछ मानवीय गुणों का होना बहुत जरूरी है, किन्तु उनका सामान्यतया अभाव पाया गया है। जिन परिवारों में ये गुण हैं वे स्वर्गीय सुखों का अनुभव करते हैं।

सरलता–पारस्परिक जीवन में वक्रता नहीं, सरलता होनी चाहिए। संबंधों में जब छुपाव जैसी वृत्ति पैदा हो जाती है, वहम पनपने लगते हैं तो आखिर एक दिन प्रतिक्रिया एवं प्रतिशोध के तीव्र भाव पैदा हो जाते हैं।

राजा ने सौ फीट एक स्तंभ बनवाया। उस आकर्षक स्तंभ को लोग बड़ी संख्या में देखने आने लगे। एक महात्मा भी उसे देखने आए। निकट जाकर उसे जी भरकर देखने लगे। अंत में उसके कान लगाकर कुछ सुनने जैसा आचरण दिखाई दिया। किसी ने पूछ ही लिया–आप क्या सुन रहे हैं कान लगाकर? क्या स्तंभ भी कभी बोलता है? हां, मेरे प्रश्न का इसने उत्तर दे दिया है। मैंने पूछा, इतने लोग यहां कैसे आ रहे हैं? तुम्हारे में कोई खासियत है? स्तंभ ने जवाब में मुझे यह बताया–मैं सीधा हूं इसलिए मेरे पर सब मुग्ध हैं। यह सीधापन बिना किसी लेन-देन के आदमी को अपना बना लेता है अर्थात् उस पर अमिट और निश्छल प्रभाव छोड़ देता है। परिवार में यह प्रभावशाली व्यवहार चाहिए जिसका आधार है सरलता।

समता–परिवार आदमी का एक ईमानदार-नित्यमित्र है। वह जैसा सुख, समाधान और सुझाव देता है वैसा सुख स्वर्ग के आस-पास भी नहीं मिलता। परिवार में प्रतिक्रिया के एवं प्रतिशोध के अवसर अधिक आते हैं। उस वातावरण में हम प्रतिक्रिया मुक्त कैसे रहें? जो इस बात को भली-भांति समझ लेते हैं वे धन प्राप्ति ही नहीं अपितु महाधन प्राप्ति की कला सीख लेते हैं, किन्तु देखा यह गया है कि परिवार के अधिकतर लोग यह सोचते रहते है। कि धन का हिस्सा मिल जाए। मैं जैसा चाहूं वैसा कर सकूं। यह लोक चेतना सबसे अधिक खतरनाक है। इसे बदल दिया जाए, इसी में सुख है।

साधकों ने पूछा–प्रभो! हम समूह में निर्लिप्त भाव से कैसे जीएं? आचार्य भिक्षु ने कहा–गण में, समूह में रहते हुए अकेलेपन का अनुभव करते जाओ। अच्छा होने पर सोचो कि मेरा क्या वास्ता? बिगड़ने पर सोचो–मैं समझदारी से काम लेता तो कितना अच्छा होता। समूह में सार्थक जीवन वही जी सकता है जो स्वयं के स्वार्थ को क्षीण कर देता है। किसी भी कार्य के साथ जुड़ी अपनी सफलता परिवार को समर्पित कर दी जाए।

अपने द्वारा किसी अच्छे कार्य के होने पर निम्न तीन चिंतन काम में लिये जा सकते हैं–

- मैं तो कार्य में मात्र निमित्त रहा हूं। निमित्त मैं ही नहीं, और भी अनेक निमित्त बने हैं।
- परिवार में किसकी पुण्यवानी काम करती है, कौन जान सकता है।
- मैं इन सभी सफलताओं से दूर हूं। मेरा अपना जगत शुद्ध चैतन्य से प्रकाशित है, वहां पुद्गल प्रभावित चेतना के लिए कोई अवकाश नहीं।

जो व्यक्ति दिन में तीन बार स्वयं को अध्यात्म के स्वर पर 'एगोऽहं' अनुभव करता है वह राग की ग्रंथि को इतनी जटिल नहीं बनाता जो अपने द्वारा सुलझाई नहीं जा सके। भाई-भाई में होने वाला मतभेद, धन का उन्माद और भौतिकता का स्वाद इसलिए बढ़ता जा रहा है कि व्यक्ति स्वयं को परिस्थिति से दूर खड़ा अनुभव नहीं करता।

''जो हो गया उसका भार नहीं जो होने वाला है उसका विचार नहीं।''

हमारी दुनिया में आदेश की भाषा अधिक चलती है। सुझाव से कम आदेश, कठोरता, कटुता, दमन तथा विरोध जैसा भाव झलकता है। विन्रमता, विवेक तथा बुद्धिमत्ता का सुझाव देते हैं तो लेते समय वातावरण में मधुरता की गंध आने लगती है। जो किसी से खुश होने के लिए तैयार नहीं, वह भी आधार से चलता है, वैसा आचरण भी करने लगता है। इसलिए अहिंसक परिवार की रचना में सुझाव की भाषा अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी। कठिनाई इस बात की है कि समाज में बड़प्पन का मापदण्ड आदेश की भाषा को मान लिया गया है अर्थात् बड़ा आदेश की भाषा में बोले–यह सर्वथा उचित मान लिया गया। माता, पिता, पति, मालिक और गुरु जब-जब कठोर आदेश की भाषा में बोलते हैं तब प्रेम और मैत्री की धारा जो वाणी की गंगा के साथ बढ़ती हुई अपनी ओर आती है, वह बंद हो जाती है। उसका स्वभाव रुक जाता है। एक व्यक्ति बोलता है–तुम्हें क्रोध नहीं करना चाहिए। तुमने बिना मतलब क्रोध क्यों किया? दूसरा व्यक्ति इसी बात को बोलता है, इस प्रसंग पर तुम शांत रहते तो कैसा रहता? यह तुम स्वयं सोचो।

मनुष्य सब कुछ बाहर से पाना चाहता है–सुख, शांति, स्वास्थ्य और आनंद। वह इस बात को भूल गया है कि इन सबका मूल स्रोत हमारे भीतर तल में है। परिवार में सभी सदस्य जब सुविधाकांक्षी बन जाते हैं तब नेतृत्व शक्ति को भारी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। एक साथ सबकी सभी इच्छाएं भरी नहीं जा सकती। इसी का परिणाम है समय से पूर्व परिवारों का विभक्त होना। अलग होने से पूर्व जो सपने संजोए जाते हैं, बहुत बार तो वे अधूरे ही रह जाते हैं, अन्य बड़ी कठिनाइयां और खड़ी हो जाती हैं। इसीलिए सुविधा जीवन की मांग नहीं होनी चाहिए। एक मांग दूसरी मांग का आमंत्रण है। इंद्रियों की आतुरता जब बढ़ती है तब परिवार में एक-दूसरे के हित टकराने लगते हैं, इसलिए प्राप्त सुविधा में संतोष के संस्कार बचपन से दिये जाएं। ●

# घर छोड़ना और निठल्ला रहना ही संन्यास है ?

**आचार्य शिवेन्द्र नागरजी**

इस संसार में अपनी प्रशंसा करना बहुत आसान है, दूसरे की बुराई करना भी आसान है, दूसरे की प्रशंसा करना थोड़ा मुश्किल है और अपनी बुराई करना असंभव है। शंकराचार्य स्वयं संन्यासी थे। उन्होंने ही समाज में संन्यास प्रथा की आलोचना भी की। उन्होंने कहा, यदि किसी ने सिर्फ संन्यासी का रूप बना रखा है, तो वह अंधा है। यदि कोई स्वार्थवश संन्यासी बना है, तो उसके लिए यह केवल पेट भरने का एक साधन है।

यह इस देश की विडम्बना है। यहां आप पत्थर तोड़ते हों, तो आपको रात का खाना मिलेगा या नहीं, इसका पता नहीं। आप रिक्शा चलाते हों, तो आपको रात का खाना मिलेगा या नहीं, इसका पता नहीं। लेकिन बस एक भगवा पहन लीजिए, उसके बाद और कुछ हो न हो, आपको खाने की कमी नहीं होगी। शंकराचार्य ने अपने स्वयं के बारे में कहा, यह संन्यास रीति बुरी नहीं है। इसका प्रयोजन है, इसका मकसद है। लेकिन इसको व्यापार मत बनाइए।

पुराने दिनों में संन्यास प्रथा क्यों शुरू हुई, उसका एक कारण था। कारण यह था कि संन्यासी लोग एक गांव से दूसरे गांव, दूसरे गांव से तीसरे गांव प्रचार में लगे रहते थे। और जब प्रचार-प्रसार करते थे तो लोग कैसे उनको पहचानें कि वह प्रचार-प्रसार करने आ रहे हैं तो उनकी खास वेशभूषा होती थी ताकि साधारण जन समझ जाएं।

जैसे आप अस्पताल जाइए, तो आपको पता चल जाता है कि यह डॉक्टर है। कोर्ट में जाइए तो आपको पता चलता है कि यह वकील है, उनकी वेशभूषा से। तो समाज में कैसे पता लगे कि यह व्यक्ति धर्म के प्रचार-प्रसार में, शास्त्रों के प्रचार-प्रसार में लगा है- यह भी उसकी वेशभूषा से।

लेकिन समय, समाज, परिस्थितियां बदलती हैं। जरूरतें बदलती हैं, तरीके बदलते हैं। अब भगवा पहनना या जटा-जूट धारण करना क्यों जरूरी है? इसीलिए शंकराचार्य ने संन्यास लेने की विधि पर कटाक्ष किया है। कटाक्ष किसी व्यक्ति विशेष, किसी समूह या किसी समुदाय के लिए नहीं था। आज हमारा समाज इस स्थिति में पहुंच गया है कि आप किसी भी व्यक्ति के बारे में कुछ कहो, वह झट से लड़ने-मरने को तैयार हो जाता है।

यह बात यदि कोई और कहता तो आप कहते, यह नास्तिक है। लेकिन शंकराचार्य स्वयं संन्यासी थे। वे कहते हैं, इसे पेट भरने का साधन मत बनाओ। वह व्यक्ति जो अध्यात्म को पेट भरने का जरिया बनाता है, वह आंखें होते हुए भी अंधा है। क्यों? क्योंकि वह अध्यात्म के इतने करीब आकर भी उससे दूर हो गया।

कृष्ण ने गीता में संन्यासी और योगी के बारे में बताया है। उन्होंने कहा, जो अपना कर्म बिना किसी लगाव के करता है, वही योगी या संन्यासी है। वह नहीं, जिसने अग्नि का (यानी गृहस्थी का) त्याग किया है। वह नहीं, जो निठल्ला बैठा है। संन्यासी वह है जो अपना कर्म उत्साह से, जोश से, मन लगाकर करता है, पर निर्लिप्त भी रहता है।

लेकिन चाहे शंकर भगवान बोलें, चाहे आदि शंकराचार्य बोलें, चाहे भगवान कृष्ण बोलें, हमने दिमाग में बसाई हुई है यह बात कि संन्यासी वह है जिसने घर-परिवार छोड़ रखा है। जिसके माथे पर जटाएं हैं या जिसने सिर मुंडवा रखा है। शंकराचार्य कहते हैं कि ऐसा संन्यास व्यर्थ है।

लेकिन हम अनभिज्ञ हैं। हम इसे सुनकर भी अनसुना कर देते हैं। ऐसे बहुत से बहुरुपिए इस संसार में हैं जिन्होंने संन्यास को इतना बदनाम किया है, जितना किसी और को नहीं। उन्होंने घर से तो संन्यास लिया, पर लिप्सा से नहीं। कर्म से संन्यास लिया, पर अपने अहंकार से नहीं। ऐसा संन्यास किस काम का?

**–विवेक निकेतन ट्रस्ट के सौजन्य से**

# क्या परिवार के रिश्ते होते हैं डिस्पोजेबल ?

डॉ. हीरालाल छाजेड़ 'जैन'

आजकल डिस्पोजेबल का युग है यूज एण्ड थ्रो जो भी चीज अनुपयोगी हो गई उसे फेंक दो। बाजार में अनेक ऐसी वस्तुएं आ गई हैं जिनको एक बार काम में लिया और फेंक दिया।

आधुनिक युग की यह मानसिकता या सोच वस्तुओं के लिए तो समझ में आती है किन्तु अर्थवाद पूंजीवादी युग में परिवार से लेकर बाहर सारे समाज को बाजारवाद ने ढक लिया है। बाजारवाद वस्तु हो या व्यक्ति उसकी उपयोगिता देखता है। इसमें हर व्यवहार में एक मकसद छुपा होता है, वह यह कि ऐसा करने से या रखने से मुझे क्या मिलेगा? जिसमें कुछ रिर्टन नजर में आता है उसे रखो उपयोगी है। जिसमें कुछ भी रिर्टन नहीं है वह अनुपयोगी है फेंक दो, छोड़ दो जिसमें कुछ रस है सीने से लगाए रखो और जिसमें कुछ नहीं उसे हटा दो। उससे छुटकारा पा लो। यह भावना जब रिश्तों में आ जाती है ते रिश्तों पर आधारित सारी संस्थाएं रेगिस्तान

बन जाती है, जिसमें भावनाओं का शीतल जल समाप्त हो जाता है। बाजार ही यह तय कर देता है कि वही रिश्ता उपयोगी है जिसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष अर्थ लाभ होने वाला है।

इसी सोच का हम सबके वस्तु बन जाने के दौर में अब वही रिश्ते निभाये जाते हैं जिनकी कुछ उपयोगिता हो खासकर आर्थिक दृष्टि से। इसी का कारण है कि वृद्ध माता-पिता अपने ही परिवार में बोझ से लगते हैं। आठ-दस बच्चों का मां-बाप वृद्धाश्रम पहुंचा दिया जाता है। परिवार का वह सदस्य जो किसी लम्बी बीमारी से ग्रस्त हो परिवार के लिए समस्या व बोझ बन जाता है। जिसने जीवन भर रिश्तों का मूल्य समझकर जिन्हें अपना माना और खून-पसीना बहाकर परिवार को सींचा ताकि वक्त आने पर उस परिवार की छत्रछाया में अपनी आखिरी सांस ले सके।

आर्थिक प्रभुसत्ता के हस्तांतरण की लालसा इतनी प्रबल होती है कि पुत्र पिता की मृत्यु का फर्जी प्रमाण-पत्र बनावकर जायदाद अपने नाम करवाने में भी नहीं हिचकिचाता। परिवार में कम आमदानी वाले बहु-बेटे के प्रति परिजनों के व्यवहार में उपेक्षा भाव आ जाते हैं। संपन्न और विपन्न रिश्तेदारों के आदर सम्मान में अंतर आ जाता है फिर चाहे रिश्ते जन्मजात रहे हों या मुंह बोले। इस दौर में रिश्तों की संजीदगी, संबंधों की भावनात्मक ऊर्जा शनैः शनैः अपनी उष्मा अपने अर्श और अपने स्वरूप खोती जा रही है। हमेशा मतलब परस्ती और खुदगर्जी और स्वार्थपरकता अपना दबदबा कायम रखने में सफल हो रही है।

एक समय था जब एक पीढ़ी द्वारा बनाए गए रिश्ते कई पीढ़ियां निभाती थी। मगर नये दौर में जन्म के रिश्ते भुलाये जा रहे हैं, मुंह बोले रिश्तों की तो बात ही क्या करें। हमारे सारे रिश्ते नये दौर में डिस्पोजेबल होते जा रहे हैं, जब तक उपयोगी है रखो वर्ना उन्हें भूल जाओ 'यूज एण्ड थ्रो'। क्या फिर से ऐसी भावना जागृत होगी, जब मनुष्य रिश्तों का सही माने में अर्थ समझ पायेगा? और उसकी उपयोगी और अनुपयोगिता से ऊपर उठकर रिश्तों का सम्मान करेगा। ●

सद्गुरु जग्गी वासुदेव

# मृत्यु सिर्फ हमारी एक कल्पना है

कभी तुमने किसी मृत व्यक्ति को देखा है? नहीं, तुमने सिर्फ एक मृत शरीर को देखा है। जब तुम कहते हो, 'फलां व्यक्ति नहीं रहा' –तो असल में तुम केवल यह बताना चाहते हो कि 'अब वह व्यक्ति तुम्हारे साथ नहीं रहा।' इसका अर्थ यह नहीं है कि वह अब अस्तित्व में ही नहीं रहा।

मृत्यु एक कल्पना है। असल में मृत्यु जैसी कोई चीज नहीं है। जो है, वह सिर्फ जीवन है- एक आयाम से दूसरे आयाम में, दूसरे से तीसरे आयाम में...।

जब भौतिक शरीर किन्हीं कारणों से टूट जाता है–चाहे कार कहीं टकरा जाए या बहुत पीने से लीवर खराब हो जाए या शरीर बहुत बूढ़ा और दुर्बल हो जाए किसी भी कारण से जब शरीर जीवन को वहन करने योग्य नहीं रह जाता, तो जीवन को इसे छोड़कर आगे बढ़ना पड़ता है।

तो जब कोई मरता है-यह मायने नहीं रखता कि वह कौन था- पिता, मां, पति, पत्नी, बच्चा या आपका प्रिय मित्र जिस क्षण वह शरीर छोड़ता है, उसका आपसे कोई संबंध नहीं रह जाता। क्योंकि जो भी वह आपके बारे में जानता था, वह सब भौतिक था। जब मैं 'भौतिक' कहता हूं, तो उसका अर्थ मात्र शरीर ही नहीं, बल्कि मन और भावनाएं भी हैं। आप उस व्यक्ति के बारे में जो भी जानते हैं या वह व्यक्ति आपके बारे में जो भी जानता है, वह या तो भौतिक शरीर के स्तर पर है या मन या भावनाओं के स्तर पर

है। तो जब वह भौतिक शरीर छोड़ देता है, ये सारी चीजें भी चली जाती हैं और फिर 'मैं या मेरे पिता' जैसी कोई चीज नहीं रह जाती। जैसे ही वे मरे कि अब वे आपके पिता नहीं रहे। वे जा चुके, अब खत्म हो गए।

जैसे ही यह विवेक-विचार वाला मन चला जाता जाता है, वह प्राणी अपनी प्रवृत्तियों के अनुसार आगे बढ़ेगा। यही कारण है कि भारत में व्यक्ति की मृत्यु जिस प्रकार होती है, उसे इतना अधिक महत्व दिया जाता है, ताकि वह जिन प्रवृत्तियों को लेकर आगे बढ़ता है, उन्हें हम अच्छी दिशा दे सकें। यह मायने नहीं रखता कि उस व्यक्ति ने पहले किस तरह का जीवन जिया है, किन्तु जब अंतिम क्षण आता है, हम भगवान का नाम लेते हैं। इसके पीछे मूल विचार यही है कि मरने वाले में थोड़ी जागरूकता पैदा हो जाए, जिससे वह किसी भय या लालच के माहौल में प्राण त्याग न करे। क्योंकि एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाने का वह अंतिम क्षण उस व्यक्ति का गुण बन जाता है, उसके आगे की यात्रा के लिए।

इसे आप आज रात सोते समय आजमा सकते हैं। जब आप जागृत अवस्था से निद्रावस्था में जाते हैं, उस अंतिम क्षण में आप जागरूक रहने की कोशिश करें। आप देखेंगे कि अगर आप जागरूक रहने की कोशिश करते हैं तो आप जगे रहेंगे, जब आप जागरूकता खो देंगे तभी आप निद्रा में प्रवेश करेंगे। पर यदि आप उस क्षण में जागरूकता बनाए रखने में समर्थ रहे तो कुछ अद्भुत चीज घटित होगी। आप सोने से पहले स्वयं में कुछ गुण लाने की कोशिश करें। मसलन प्रेम से भरे हुए या खूब खुशी से भरे हुए। आप देखेंगे कि वह भाव आपकी निद्रावस्था में बना रहेगा।

ठीक यही बात मृत्यु के साथ भी घटित होती है। यदि अंतिम क्षणों में अपने अंदर कुछ गुण लाए जाएं, तो वह गुण आगे भी जारी रहेगी। इसी समझ के कारण, भारत में जब लोग मरना चाहते हैं, तो वे अपने घर पर नहीं, काशी जाना चाहते हैं, क्योंकि सदियों से काशी सिद्ध ज्ञानी-महात्माओं का केंद्र रही है।

**–ईशा फाउंडेशन के सौजन्य से**

---

श्री आनंदमूर्ति

# भक्त और भगवान

भगवान तो सब के हैं, अभक्त के भी हैं। फिर तुम लोग क्यों कहते हो, 'भक्त के भगवान?'

बात यह है कि अन्य लोग यह बात महसूस नहीं करते हैं कि भगवान उनके हैं। यह बोध केवल भक्त में होता है। इसलिए ये भक्त के भगवान कहे जाते हैं। भक्त भगवान को इस अनुभूति से बांधे रहते हैं। उपनिषद में कहा गया है।

**'नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः**
**न मेधया न बहुना श्रुतेन॥'**

परमपुरुष को अध्ययन के द्वारा, अपार पाण्डित्य के द्वारा न कभी किसी ने पाया है, न पा रहे हैं और न पायेंगे। मानव जीवन सीमित है। अतः अध्ययन के द्वारा भगवत्-प्राप्ति की व्यर्थ चेष्टा नहीं करो। लम्बे-चौड़े भाषण देने से कोई परमपुरुष हो नहीं पाते हैं, लेकिन एक अपढ़ किसान पा जाता है। बीस विषयों में एमए करने पर भी परमात्मा नहीं मिलेंगे। साधना मार्ग में निम्नतम योग्यता है केवल एक निर्मल हृदय और कुछ नहीं।

बुद्धिमान समझते हैं कि उन लोगों ने परमात्मा को जैसे समझा है, जितना इनके बारे में सोचा है, उतना बुद्धिहीन कैसे कर पायेंगे। और लोग मेरे बराबर श्रेष्ठ नहीं हैं, मुझे ही भगवत प्राप्ति होगी। उपनिषद का कहना है कि मेधा से भगवत् प्राप्ति नहीं होगी। मनुष्य के छोटे से दिमाग में कितनी बुद्धि रहती है और भगवान कितने विराट हैं! और फिर यह बुद्धि भी तो सदा नहीं रहती। कुछ लोग सोचते हैं कि मैंनें बहुत सुना है, शास्त्रों की चर्चा, भक्तों और विद्वानों के भाषण। मुझे भगवत्-प्राप्ति अवश्य होगी। परन्तु यह भी ठीक नहीं है। सबसे अधिक तो सुनता है माइक, तो क्या उसे भगवत्-प्राप्ति हो जाएगी?

बात यह है कि जिन पर उनकी कृपा होती है वे ही उनको पा सकते हैं। अन्य लोग 'हरिपरिमण्डल' के सदस्य नहीं बन सकते। जिन पर उनकी कृपा हो जाती है वे अनुभव करते हैं कि परमपुरुष मेरे हैं। ●

# नागों को पूजने से होती हैं मनोकामनाएं पूरी

यह त्योहार श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को मनाया जाता है। इस दिन नागों की पूजा की जाती है। इसलिए इस पंचमी को नागपंचमी कहा जाता है। ज्योतिषी के अनुसार पंचमी तिथि के स्वामी नाग हैं। अत: पंचमी नागों की तिथि है।

गरुड़ पुराण के अनुसार नागपंचमी के दिन घर के दोनों ओर नाग की मूर्ति खींचकर अनंत आदि प्रमुख महानगरों का पूजन करना चाहिए।

स्कंद पुराण के नगर खण्ड में कहा गया है कि श्रवण पंचमी को चमत्कारपुर में रहने वाले नागों को पूजने से मनोकामना पूरी होती है।

नारद पुराण में सर्प के डसने से बचने के लिए कार्तिक शुक्ल चतुर्थी को नाग व्रत करने का विधान बताया गया है। आगे चलकर सुझाव भी दिया गया है कि सर्पदंश से सुरक्षित रहने के लिए परिवार के सभी लोगों को भादों कृष्ण पंचमी को नागों को दूध पिलाना चाहिए।

इस व्रत में चतुर्थी के दिन एक बार भोजन करें तथा पंचमी के दिन उपवास करके शाम को भोजन करना चाहिए। इस दिन चांदी, सोने, लकड़ी या मिट्टी की कलम से हल्दी और चंदन की स्याही से पांच फल वाले पांच नाग बनाएं और पंचमी के दिन, खीर, कमल, पंचामृत, धूप, नैवेद्य आदि से नागों की विधिवत पूजा करें। पूजा के बाद ब्राह्माणों को लड्डू या खीर का भोजन कराएं। पंचमी को नागपूजा करने वाले व्यक्ति को उस दिन भूमि नहीं खोदनी चाहिए।

प्राचीनकाल में इस दिन घरों को गोबर में गेरू मिलाकर लीपा जाता था। फिर नाग देवता की पूर्ण विधि-विधान से पूजा की जाती थी। पूजा करने के लिए रस्सी में सात गांठे लगाकर रस्सी का सांप बनाकर इसे लकड़ी के पट्टे के ऊपर सांप का रूप मानकर बैठाया जाता है। हल्दी, रोली, चावल और फूल चढ़ाकर नाग देवता की पूजा की जाती है। फिर कच्चा दूध, घी, चीनी मिलाकर इसे लकड़ी के पट्टे पर बैठे सर्प देवता को अर्पित करें। पूजन करने के बाद सर्प देवता की आरती करें। इसके बाद कच्चे दूध में शहद, चीनी या थोड़ा-सा गुड़ मिलाकर जहां कहीं भी सांप की बांबी या बिल दिखे उसमें डाल दें और उस बिल की मिट्टी लेकर चक्की लेकर, चूल्हे, दरवाजे के निकट दीवार पर तथा घर के कोनों में सांप बनाएं। इसके बाद भीगे हुए बाजरे, घी और गुड़ से इनकी पूजा करके, दक्षिण ा चढ़ाएं तथा घी के दीपक से आरती उतारें। अंत में नागपंचमी की कथा सुनें।

यह तो सभी जानते हैं कि सांपों के निकलने का समय वर्षा ऋतु हैं। वर्षा ऋतु में जब बिलों में पानी भर जाता है तो विवश होकर सांपों को बाहर निकलना पड़ता है। इसलिए नागपूजन का सही समय यही माना जाता है। सुगंधित पुष्प तथा दूध सर्पों को अति प्रिय है। इस दिन ग्रामीण लड़कियां किसी जलाशय में गुड़ियों का विसर्जन करती हैं। ग्रामीण लड़के इन गुड़ियों को डण्डे से खूब पीटते हैं। फिर बहन उन्हें रुपये भेंट करती हैं।

किसी नगर में एक किसान अपने परिवार सहित रहता था। उसके तीन बच्चे थे दो लड़के

**इस व्रत में चतुर्थी के दिन एक बार भोजन करें तथा पंचमी के दिन उपवास करके शाम को भोजन करना चाहिए। इस दिन चांदी, सोने, लकड़ी या मिट्टी की कलम से हल्दी और चंदन की स्याही से पांच फल वाले पांच नाग बनाएं और पंचमी के दिन, खीर, कमल, पंचामृत, धूप, नैवेद्य आदि से नागों की विधिवत पूजा करें। पूजा के बाद ब्राह्माणों को लड्डू या खीर का भोजन कराएं।**

और एक लड़की। एक दिन जब वह हल चला रहा था तो उसके हल के फल में बिंधकर सांप के तीन बच्चे मर गए। बच्चों के मर जाने पर मां नागिन विलाप करने लगी और फिर उसने अपने बच्चों को मारने वाले से बदला लेने का प्रण किया। एक रात्रि को जब किसान अपने बच्चों के साथ सो रहा था तो नागिन ने किसान, उसकी पत्नी और उसके दोनों पुत्रों को डस लिया। दूसरे दिन जब नागिन किसान की पुत्री को डसने आई तो उस कन्या ने डरकर नागिन के सामने दूध का कटोरा रख दिया और हाथ जोड़कर क्षमा मांगने लगी। उस दिन नागपंचमी थी। नागिन ने प्रसन्न होकर कन्या से वर मांगने को कहा। लड़की बोली-मेरे माता-पिता और भाई जीवित हो जाएं और आज के दिन जो भी नागों की पूजा करे उसे नाग कभी न डसे। नागिन तथास्तु कहकर चली गई और किसान का परिवार जीवित हो गया। उस दिन से नागपंचमी को खेत में हल चलाना और साग काटना निषिद्ध हो गया।

जनमानस में नागपंचमी पर्व की विविध जनश्रुतियां और कथाएं प्रचलित हैं। नागपंचमी के संबंध में कुछ बहुप्रचलित कथाएं इस प्रकार है।

एक राजा के सात पुत्र थे, उन सबका विवाह हो चुका था। उनमें से छह पुत्रों के संतान भी हो चुकी थी। सबसे छोटे पुत्र के अब तक के कोई संतान नहीं हुई, उसकी बहू को जेठानियां बांझ कहकर बहुत ताने देती थी।

एक तो संतान न होने का दुख और उस पर सास, ननद, जेठानी आदि के ताने उसको और भी दुखित करने लगे। इससे व्याकुल होकर वह बेचारी रोने लगती। उसका पति समझाता कि संतान होना या न होना तो भाग्य के अधीन है, फिर तू क्यों दुखी होती है? वह कहती- सुनते हो, सब लोग बांझ-बांझ कहकर मेरी नाक में दम किए हैं।

पति बोला-दुनिया बकती है, बकने दे मैं तो कुछ नहीं कहता। तू मेरी ओर ध्यान दे और दुख को छोड़कर प्रसन्न रह। पति की बात सुनकर उसे कुछ सांत्वना मिलती, परन्तु फिर जब कोई ताने देता तो रोने लगती थी।

इस प्रकार एक दिन नागपंचमी आ गई। चौथ की रात को उसे स्वप्न में पांच नाग दिखाई दिए, उनमें एक ने कहा-'अरी पुत्री! कल नागपंचमी है, तू अगर हमारा पूजन करे तो तुझे पुत्र रत्न की प्राप्ति हो सकती है। यह सुनकर वह उठ बैठी और पति को जगाकर स्वप्न का हाल सुनाया। पति ने कहा यह कौन सी बड़ी बात है?

पांच नाग अगर दिखाई देते हैं तो पांचों की आकृति बनाकर उसका पूजन कर देना। नाग लोग ठंडा भोजन ग्रहण करते हैं, इसलिए उन्हें कच्चे दूध से प्रसन्न करना। दूसरे दिन उसने ठीक वैसा ही किया। नागों के पूजन से उसे नौ मास के बाद सुंदर पुत्र की प्राप्ति हुई।

**-प्रस्तुति: बेला गर्ग**

# साइंस में भी हैं जिंदगी संवारने वाले कमांडमेंट्स

बलदेव राज दावर

इंसान के लिए उन बातों का बहुत महत्व है जिनसे जिंदगी को सही दिशा मिलती है। ऐसे दिशा-निर्देश कई धार्मिक पुस्तकों में हैं। कई संत-फकीर भी जीवन संवारने वाली बातें कहते हैं। साइंस के कई प्रचलित मतों में भी ऐसे आदेश या कमांडमेंट्स छिपे हैं। उनसे हम कई सबक ले सकते हैं:

● सभी मनुष्य और अन्य सभी प्राणी पशु-पक्षी, कीट-पतंग और पेड़-पौधे साझा पुरखों की संतानें हैं। प्राणियों की सभी जातियां एक ही जीव-वृक्ष की शाखाएं हैं। तुम सभी प्राणियों को बराबर का रिश्तेदार मानो। खुद को बड़ा और दूसरे को छोटा मानने की गलती न करो।

● इस ब्रह्मांड की रचना किसी ने सोच-समझ कर नहीं की। यह सृष्टि अपने आप पैदा हुई है। जीव-वृक्ष का विकास भी अपने आप हो रहा है।

● तुम इस दुनिया में कहीं बाहर से नहीं आए थे। न ही शून्य से प्रकट हुए थे। तुम अपने माता-पिता के शरीर से जन्मे थे। हाड़-मांस का यह शरीर और दिल-दिमाग सब उन्हीं से मिला है। इसी तरह तुम्हारे माता-पिता अपने माता-पिता की संतान हैं। अनगिनत पीढ़ियों की यही कहानी है। तुम्हारे पुरखे तम्हारा अतीत हैं। इस तरह सोचो तो, वे मरे या मिटे नहीं हैं। जब तक तुम और तुम्हारे भाई-बहन जिंदा हैं जब तक अपने किसी पुरखे को तुम मिटा हुआ नहीं मानो।

● असल में तुम खुद भी तीन-चार अरब साल पहले पैदा हुए थे। वह इसलिए क्योंकि मनुष्य तभी इस धरती पर जन्मा था। इसके बाद पीढ़ी-दर-पीढ़ी जीवन की यह धारा बहती चली आ रही है। इसिलए तुम्हारा जीवन अनमोल है। उसका आदर करो, उसे स्वस्थ बनाते हुए हर खतरे से उसकी रक्षा करो।

● जैसे तुम्हारे पुरखे तुम्हारे रूप में अमर हैं वैसे ही तुम भी अपनी संतानों के रूप में अमर रहोगे।

● वैज्ञानिक इस बात को लेकर सहमत हैं कि ब्रह्मांड का जन्म 13.8 अरब साल पहले हुआ था। पांच अरब साल पहले हमारे सूरज और 4.6 अरब साल पहले पृथ्वी का निर्माण हुआ था। 3.8 अरब साल पहले मिट्टी में अति सूक्ष्म जीवों (बैक्टीरिया) के निशान मिले हैं। इस हिसाब से वे हमारे पहले पुरखे थे।

● शब्दों को बोलने और उन्हें सुनने का हम में जो क्षमता है वह माता-पिता से मिली है। लेकिन उन कहे-सुने शब्दों के अर्थ हमें समाज से मिले हैं। यानी भाषा समाज से प्रकट हुई है। इसी तरह साहित्य, शिक्षा, संगीत, खेल-तमाशे और कलाएं आदि भी समाज से पैदा हुई हैं। इनके लिए समाज का आभार मानो। इसलिए समाजिक बनो और समाज के अनुशासन में रहो।

● समाज कुछ कूड़ा-कचरा भी पैदा करता है: अंधविश्वास, जादू-टोना और भूत-प्रेतों की कहानियां, बैर भाव, धर्म-सम्प्रदायों और सरकारी कुशासन आदि। यह कचरा रोगों की तरह चिपट जाता है। इन रोगों से बचने और मुक्त होने की कोशिश करनी चाहिए।

● इंसान ने अपने स्वार्थ के लिए पृथ्वी के संसाधनों की तेजी से दुहा है। इससे कई जीव-प्रजातियां पूरी तरह नष्ट हो गई हैं। इससे वातावरण असंतुलित हो गया है। यह असंतुलन दूर करने और पृथ्वी पर आए संकट को मुकाबला करने के लिए हमें साइंस और टेक्नोलॉजी का सार्थक इस्तेमाल करना चाहिए।

● साइंस के ये कमांडमेंट्स हमें इस ब्रह्मांड के रहस्यों को समझने और प्रकृति व जीव जगत की रक्षा के लिए प्रेरित करते हैं। इनसे मिली समझ हमें नई खोजों की तरफ भी बढ़ाती है। ●

# सच्ची प्रार्थना

एक गरीब गाड़ीवान ने यहूदी धर्माचार्य रबी बर्डिक्टेव के पास आकर पूछा-महाराज, मैं एक गांव से दूसरे गांव गाड़ी हांका करता हूं। यह पेशा मुझे पसंद नहीं, क्योंकि मैं भगवान की प्रार्थना के लिए सेनेगाग यानी प्रार्थना घर जाने को नियमित समय नहीं दे पाता। मुझे अब यह पेशा छोड़ देने के अलावा अन्य कोई रास्ता सूझ नहीं रहा है।

इस बात को सुनकर रबी ने पूछा- क्या गाड़ी चलाते समय तुम्हारी गरीब बूढ़े यात्रियों से कभी भेंट होती है? उसने जवाब दिया- जी हां, मुझे गरीब, दीन-दुखी यात्री मिलते हैं। क्या तुम उन्हें कभी मुफ्त सवारी का अवसर देते हो। गाड़ीवान ने हां कहा।

रबी ने कहां- तब तुम इस पेशे को हरगिज मत छोड़ो। तुम गरीब लोगों को एक जगह से दूसरी जगह छोड़कर जो पुण्य कर रहे हो वह पुण्य सेनगाग में प्रार्थना करने से हरगिज नहीं मिलेगा। क्योंकि दीन-दुखियों की सेवा ही भगवान की सच्ची प्रार्थना है।

**-विनोद किला**

# प्रेरणा देने वाले राज चेट्टी

**जनार्दन शर्मा**

हाल ही में राहुल गांधी ने देश की समस्याओं को 'मधुमक्खी का छत्ता' बताकर समाधान की राह ढूंढने की मुहिम जगा दी है। कहना न होगा कि भारतीय मूल के अमेरिकी वैज्ञानिक हरगोविन्द खुराना ने 'जीन्स' में नोबल पुरस्कार पाकर कई साल पहले भारत आये तब उन्हें देश के युवकों के सामने चुनौतियों का हल बताने का आग्रह पर उन्होंने यही कहा था युवा परिश्रम करें।

इसी कड़ी में गत वर्ष दुबारा राष्ट्रपति चुने जाने पर अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के शब्द स्मरणीय हैं जो उन्होंने अपने राष्ट्रीय उद्बोधन में एक भारतीय मूल के युवक राज चेट्टी के कार्य व विचार की प्रशंसा में कहा था राज चेट्टी का कार्य व विचार महत्वपूर्ण है जिन्होंने कई तरीकों से व्यवस्थित ढंग से शिक्षा में नैतिक मूल्यों के साथ सार्वजनिक नीति के मानदंडों पर प्रकाश डाला है, जिससे उनकी भूमिका एक रचनात्मक अर्थशास्त्री की बनी, नई दिशा देती है।

अमेरिका की हार्वर्ड विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के प्रमुख प्रोफेसर प्रो. राज चेट्टी को ही 2013 का प्रतिष्ठित जोन बेट्स क्लार्क मेडल या वेबी नोबल पुरस्कार से नवाजा गया है। अमेरिकन इकनोमिक एसोसिएशन द्वारा यह

**राज की विलक्षण प्रतिभा का लोहा इसी से माना जाता है वह 28 वर्ष की उम्र में ही हार्वर्ड विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र एवं उसकी प्रयोगशाला की डेस्ट के डाइरेक्टर बन गये।**

पुरस्कार 40 वर्ष से कम उम्र के युवा को दिया जाता है जिनके विचार व ज्ञान महत्वपूर्ण है। यह सम्मान प्राप्त करने वालों में पौल क्रुगमेन, पोल सेम्युअनसन, मिल्टन फ्राइडमेन आदि रहे हैं जो सभी नोबल प्राप्त है एवं प्राय: तीन में से एक नोबल जीतता है, इसीलिए इसे वेबी नोबल पुरस्कार कहते हैं। राज चेट्टी के मेन्टर (गुरु) मार्टिन फिल्डस्टीन ने भी यह पुरस्कार पाया था। वस्तुत: क्लार्क मेडल के मापदंड से राज बहुत छोटा और नौसिखीया युवा (33 वर्ष) कहा जा सकता है, किन्तु राज की विलक्षण प्रतिभा का लोहा इसी से माना जाता है वह 28 वर्ष की उम्र में ही हार्वर्ड विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र एवं उसकी प्रयोगशाला की डेस्ट के डाइरेक्टर बन गये तथा उनकी प्रतिभा, निष्ठा, सादगीमय बौद्धिकता को ही सम्मान मिला है इसमें उनके थीम वाक्य को महत्व मिला है। शिक्षक व विद्यार्थी के मूल्य आधारित रिश्ते भविष्य में भी सुपरिणामकारी होते हैं। अमेरिकन एसोसिएशन ने गर्व से कहा राज चेट्टी ने अल्प आयु में ही एक सूक्ष्म दृष्टा अर्थशास्त्री के रूप में स्थापित किया है।

भारतवंशी राज नई दिल्ली में जन्म लेकर 9 वर्ष की उम्र में माता-पिता के साथ अमेरिका जाकर पहले मिल्वायके स्कूल और बाद में प्रतिभा व परिश्रम के बल पर हार्वर्ड विश्वविद्यालय में पढ़कर 23 वर्ष की आयु में वर्कले विश्वविद्यालसय में अस्सिटेंट प्रोफेसर अर्थशास्त्र के बने और 27 वर्ष उम्र में वहीं पक्के होकर 29 की उम्र में अपनी पूर्व की हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक एवं विचारधारा को प्रयोगशाला व डेस्क के डाइरेक्टर बनकर योग्यता का डंका बजाया। इनको (वेबी) नोबल मिलने पर किसी को आश्चर्य नहीं है। भारतीय युवकों को इनसे प्रेरणा लेनी चाहिए और देश को दिशा देने वालों को इस सबक से मार्गदर्शन लेना चाहिए।

**–सत्य सदन, पुष्कर (राजस्थान)**

# तीन डर

**पहला**- मैं तो यह सोचकर ही इतना डर जाता हूं कि बाजार है जिसमें सिर्फ मर्द ही मर्द हैं, औरत कोई है ही नहीं। एक बिल्डिंग है जिसमें सिर्फ मर्द रहते हैं, औरत कोई है ही नहीं। एक ट्रेन है जिसमें हम लोग बैठे जा रहे हैं उसमें केवल मर्द हैं। सोचिए, आप किसी रेस्टोरेंट में खाना खा रहे हैं जिसमें सिर्फ मर्द ही हैं और कोई नहीं है। कैसी दुनिया हम लोग चाहते हैं? बिना औरत के यह दुनिया कैसी होगी? औरत, मां की शक्ल में हो, बहन की शक्ल में हो, प्रेमिका की शक्ल में हो, पत्नी की शक्ल में हो, वो तो नजाकत है, हमारी जिंदगी की नफासत है। उसको हम कैसे भूल सकते हैं? उसको हम खत्म कर रहे हैं। बहुत बड़ी तकलीफ की बात है। बिल्कुल उसी तरह से जैसे हम जंगल और पेड़ को काट रहे हैं। पानी बर्बाद कर रहे हैं जमीन का, वैसे ही हम बेटियों को भी मार रहे हैं।

**दूसरा**- हम लोग बिजली जलाकर बैठ जाते हैं सारे घर की और खुश होकर सबको बतलाते हैं कि हमारे यहां दस हजार का बिल आता है बिजली का। मेरा कहना है, मूर्ख आदमी, तुम जैसे बहुत सारे लोगों की वजह से बहुत सारे इलाकों में बिजली की कटौती हो रही है। बहुत सारे किसानों को बिजली नहीं मिल पाती होगी। बहुत सारे कारखानों में बिजली नहीं चलती होगी। बहुत नुकसान हो रहा होगा पूरे देश का। पानी का हाल पूरी धरती पर बुरा हो गया है। सोचिए, दो सौ फुट पर पानी मिलता है। पहले पन्द्रह-बीस फुट पर पानी मिल जाता था। तो ऐसा हाल तो किया हमने। एक साइंटिस्ट ने कहा है 2050 तक इतनी हीट बढ़ चुकी होगी कि हम लोग दीवारों तक को हाथ नहीं लगा सकेंगे। ऐसे कपड़े पहनकर घर से निकलना पड़ेगा, जिस पर हीट असर न करे। नॉर्मल कपड़े पहनकर आप जा नहीं सकेंगे। स्किन डिसीज इतनी ज्यादा हो जाएगी। पानी मिलेगा ही नहीं। उसके सब्स्टीट्यूट ढूंढने पड़ेंगे। इंसान की शक्ल ही ऐसी हो जाएगी, उस वक्त भयावह सी। हम उस पानी को बेकार कर रहे हैं।

**तीसरा**- हमारा सोचना तो यह होता है कि जब होगा तब देखा जाएगा। अरे, हमने ऐसे करम ही नहीं करे जो हमारे साथ ऐसा हो। हर गलत काम करने वाला ऐसा कहता है। फिर वो भले ही तिरुपति बालाजी जाए या जम्मू जाए माताजी के पास अपने पाप माफ कराने, मगर उससे क्या होता है? हम लोग तो इतने भाग्यवादी हैं कि जब प्रलय आएगी तब देख लेंगे और जब सब मर जाएंगे तब हम भी मर जाएंगे। ये उदासीनता एक-दूसरे के प्रति है हमारी। मैं चार बाल्टी पानी से नहाऊंगा, मेरे पड़ोसी के घर भले ही पीने के लिए पानी हो, न हो।

**-मुरली कांठेड़**

# श्रीकृष्ण ही धर्म है

आचार्य सुदर्शन

**भगवान श्रीकृष्ण का जन्म एक चमत्कार था। श्रीकृष्ण ने द्वापर युग में उस घोर अंधकार के समय अवतार लिया, जब समाज का नैतिक पतन बहुत तेजी से हो रहा था। उस अंधकार की पृष्ठभूमि के बीच वह पूर्ण चन्द्रमा बनकर प्रकट हुए। भगवान श्रीकृष्ण ने अन्याय को ललकारने के लिए पांचजन्य का उद्घोष किया। ऐसे में जबकि अनीति चरम सीमा पर थी।**

धर्म को परिभाषित करना आसान नहीं है। यदि कहा जाए कि श्रीकृष्ण की परिभाषा बताओ, तो यह संभव नहीं होगा। अगर हम श्रीकृष्ण को भली-भांति समझ लेते हैं, तो फिर धर्म को अलग से समझने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। श्रीकृष्ण ने जो आचरण किया, वही हमारे लिए धर्म है। श्रीकृष्ण ने जो कहा, वही हमारा धर्म है। गोवर्धन पर्वत को उठाकर उन्होंने इन्द्रदेव को जो चुनौती दी, वही चुनौती हमारे जीवन की चुनौती है।

प्रायः देखा जाता है कि रास-लीलाओं में बड़ी भीड़ जमा हो जाती है। जहां रूखा-सूखा प्रवचन होता है, वहां बहुत कम लोग ही जाते हैं। श्रीकृष्ण को रास अच्छा लगता है, वह मोहन हैं। इसलिए आप श्रीकृष्ण को समझ लो। जैसे ही आप श्रीकृष्ण को समझ जाओगे वैसे ही धर्म भी आपको समझ में आ जाएगा। श्रीकृष्ण ने अपने पिता के प्रति कैसे कर्तव्य का निर्वहन किया? राधा के प्रति उनका क्या कर्तव्य था? उन्होंने अपने मित्रों के प्रति कैसा व्यवहार रखा? यदि तुम ये सब जानना चाहते हो, तो तुम्हें सबसे पहले श्रीकृष्ण को समझना ही होगा। इसलिए महाभारत में भी कहा गया है कि श्रीकृष्ण से बढ़कर और कौन हो सकता है? यदि आप छात्र हैं तो श्रीकृष्ण आपको छात्र जीवन में ही दिखेंगे। यदि आप नई पीढ़ी के युवा बनकर मधुसूदन की ओर देखोगे, तो फिर आपको वे युवा पीढ़ी की तरह ही दिखेंगे। कहने का तात्पर्य है कि धर्म शुरू भी श्रीकृष्ण से होता है और समाप्त भी श्रीकृष्ण पर। आप जिस रूप में श्रीकृष्ण को पाना चाहते हैं, वह आपको उसी रूप में मिलेंगे।

भगवान श्रीकृष्ण का जन्म एक चमत्कार था। श्रीकृष्ण ने द्वापर युग में उस घोर अंधकार के समय अवतार लिया, जब समाज का नैतिक पतन बहुत तेजी से हो रहा था। उस अंधकार की पृष्ठभूमि के बीच वह पूर्ण चन्द्रमा बनकर प्रकट हुए। भगवान श्रीकृष्ण ने अन्याय को ललकारने के लिए पांचजन्य का उद्घोष किया। ऐसे में जबकि अनीति चरम सीमा पर थी। शुकुनि जैसे लोग, विदुर का सभा से निकाला जाना, धर्मराज युधिष्ठिर का जुआ खेलना आदि। उन्होंने धर्म पालन के लिए पूतना, वकासुर, धेनुकासुर आदि का वध किया। कालिया नाग के फन पर बैठकर बांसुरी की तान छेड़ी। दुर्योधन उनका आतिथ्य संस्कार करके रिझाना चाहता था, फिर भी उन्हें विदुराणी का शक ही पसंद आया। उन्होंने सुदामा के चरण धोए। उनकी गुणगरिमा यह रही कि राजसूय यज्ञ में सर्वोच्च स्थान पाकर भी शिशुपाल की गालियां सुनीं। शिशुपाल जब सारी मर्यादाएं लांघ गया तो उनका सदुर्शन चक्र प्रकट हुआ। हालांकि ज्यादातर स्वरूप उनका बांसुरी में ही दिखता है। धर्म यदि जीवन में उतरे तो श्रीकृष्ण उस व्यक्ति के रिश्तेदार बन जाते हैं।

यदि आप चाहते हैं कि आपके देश में पूर्णतः शांति हो, सुख और समृद्धि साम्राज्य हो तो फिर आपको श्रीकृष्ण को अपने जीवन में उतारना ही होगा। युद्ध की भूमि में भी श्रीकृष्ण कहते हैं कि अन्याय को बढ़ता देख धर्म को भी कभी-कभी तलवार उठानी पड़ती है। श्रीकृष्ण ने भी तो महाभारत में यही किया था। उसी प्रकार हमारे मन की जो वृत्तियां हैं, जिससे लोग डरते हैं और कहते हैं कि तुम ब्रह्मचर्य का पालन करो। ठीक है, वह अच्छी बात है। संयमित होना, स्वयं अपने जीवन का एक बहुत बड़ा धर्म होता है। लेकिन यदि आप अपनी दुष्प्रवृत्तियों का शमन नहीं कर पा रहे हैं, तो आपके पास ज्ञान का अभाव है। इन दुष्प्रवृत्तियों का शमन आप उस स्थिति में ही कर सकते हैं, जब आपको पता हो कि आप आखिर लड़ने किससे जा रहे हैं? यदि आप क्रोध से लड़ने जा रहे हैं तो आपको सबसे पहले यह पता होना चाहिए कि क्रोध आखिर है क्या? जब आपको यह पता चल जाएगा कि क्रोध होता क्या है, इसके कारण क्या हैं तो आसानी से क्रोध से लड़ा जा सकता है।

आपके अंदर कोई भी विकार हो, उन्हें आप सामने आने दो। जिस प्रकार हम किसी मर्ज की दवा होमियोपैथी से कराते हैं, तो होमियोपैथ सबसे पहले उस बीमारी को थोड़ा और बढ़ाता है, फिर उसके बाद उसे समाप्त करता है। यदि आप विकृति की जड़ को ही समझ जाते हैं, तो काम, लोभ और मोह जैसी दुष्प्रवृत्तियों को आसानी से समाप्त कर लेंगे। आपका मन क्यों भाग रहा है, वह एक जगह एकाग्र क्यों नहीं हो पा रहा है? बस, आप मन की जड़ में बैठो। पहले मन के विज्ञान को समझो, फिर मन के अंतर्मन को भी समझ जाओगे। इन सबको जानने से पहले आपको श्रीकृष्ण को समझना होगा। ●

**मैं शिक्षा का विरोधी नहीं, पर उसी शिक्षा को सार्थक मानता हूं, जो जीवन-व्यवहार को परिष्कृत करने वाली हो। जो शिक्षा जीवन का सही निर्माण न कर सके, ऐसी शिक्षा की कोई विशेष उपयोगिता मैं नहीं देखता, बल्कि कहना चाहिए कि वह मात्र भार है।**

—आचार्य तुलसी

**शिक्षा आत्मा में मनुष्य का सतत जन्म है, यह आंतरिक राज्य की ओर जाने वाला राजमार्ग है। सारी बाह्य महिमा आंतरिक प्रकाश का प्रतिफलन-मात्र है। शिक्षा सर्वोच्च जीवन-मूल्यों के चुनाव की ओर उन दृढ़ रहने की पूर्व कल्पना करती है।**

—डॉ. एस. राधाकृष्णन

# श्री तिरूपति बालाजी

कृष्णचंद टवाणी

तिरूपति बालाजी के नाम से विख्यात यह विश्व प्रसिद्ध मंदिर आंध्र प्रदेश के चित्तूर जिले में तिरूमल्ला पर्वत पर स्थित है। किसी ट्रेन से बंगलोर पहुंचकर सात घंटे में तिरूपति पहुंचा जा सकता है। यहां से जीप व सरकारी बस हर समय तिरूमल्ला के लिए उपलब्ध रहती है। लगभग एक किलोमीटर चढ़ाई के बाद तिरूमल्ला पर्वत के ऊपर पहुंच जाते हैं। यहां अपना सामान क्लॉक रूम में जमा करके मंदिर के पास बने तालाब में स्नान के लिए जाते हैं। स्नानादि के पश्चात प्रसाद आदि लेकर दर्शन के लिए पंक्ति में लग जाते हैं। प्रसाद के रूप में यहां देशी घी से निर्मित लड्डू जिनमें केशर इलायची भी होती है, बिक्री की जाती है। जिसका स्वाद अपने आप में अनूठा होता है। यह प्रसाद मंदिर की रसोई में ही तैयार किया जाता है। वितरित करने से पहले भगवान वैंकटेश को भोग लगाया जाता है, इसके बाद यह भक्तों को वितरित किया जाता है। असली घी से तैयार यह प्रसाद एक आनंद का अनुभव कराता है।

विश्व में सबसे अधिक विख्यात धनी मंदिर है श्री तिरूपति बालाजी वैंकटेश्वर भगवान का मंदिर जहां प्रतिदिन श्री वैंकटेश भगवान के दर्शनार्थ लगभग चालीस हजार भक्तजन आते हैं। कहते हैं वैंकटेश भगवान के भक्तों पर मां की कृपा सदैव बनी रहती है। इसी उद्देश्य से यहां आकर भक्त जन केशदान व धन-दान करते हैं। जिससे मंदिर ट्रस्ट को करोड़ों रुपयों की प्रतिवर्ष आमदनी होती है। भगवान विष्णु जहां एक ओर उत्तर भारत में हिमालय पर्वत पर बद्रीनाथजी के रूप में विद्यमान है वहीं दूसरी ओर दक्षिण भारत (आंध्र प्रदेश) में तिरुमाला पर्वत पर बालाजी वैंकटेश्वर भगवान के रूप में विराजमान है।

इस मंदिर में एक बहुत ही अद्‌भुत उत्सव मनाया जाता है 'ब्रह्मोत्सव।' ऐसा मानना है कि भगवान 'ब्रह्म' स्वयं इस उत्सव को संपादित करते हैं। एक किंवदंती है कि जब भृगुऋषि ने विष्णु भगवान के सीने में लात मार दी तो उनका हृदय अपवित्र हो गया जिससे लक्ष्मीजी रूठ कर चली गई। भगवान विष्णु जंगलों पहाड़ों आदि में खोजते शेषांचल पहाड़ी पर आ गये जो तिरूमल्ला पहाड़ी के नाम से प्रसिद्ध है। यहां एक सांप की बाम्बी में बैठ गये व मां लक्ष्मी का ध्यान करने लगे। भगवान नौ दिन यहां रहे और ब्रह्माजी गाय बनकर दूध पिलाते रहे। यह नौ दिन का ब्रह्मोत्सव आश्विन मास में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को प्रारंभ होकर शुक्ल पक्ष की नवमी को समाप्त हो जाता है।

इसमें भगवान वैंकटेश्वर की सवारी नौ दिन अलग-अलग वाहनों में बैठाकर निकाली जाती है। ब्रह्मोत्सव के दिनों में यहां दर्शन के लिए भक्त 30-30 घंटे तक पंक्ति में लगे रहते हैं। पंक्ति में लगे-लगे ही खाना व सोना। यदि आपके पास समय कम है तो 40 व 50 रुपये का टिकट लेकर शीघ्र दर्शन कर सकते हैं। परन्तु ब्रह्मोत्सव में इस प्रक्रिया में भी 4 या 5 घंटे पंक्ति में लगना पड़ता है। इतनी परेशानियों के बावजूद ब्रह्मोत्सव में यहां जाना अपने आप में एक यादगार अनुभव होता है। ब्रह्मोत्सव में यहां 40 फीट तक के ऊंचे ढांचे बनाकर उन्हें बल्बों से सजाया जाता है वह हर तरफ रोशनी ही रोशनी नजर आती है।

देवी पद्मावती और श्रीनिवासजी का विवाह जितने वैभव से हुआ उसे बताने में वाणी व लेखनी असमर्थ है इन सबसे प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने प्रार्थना की-हे प्रभु! आपके मनोहर रूप की याद रहे इसलिए मुझे हर साल यह ब्रह्मोत्सव मनाने की स्वीकृति देवे। अत: यह उत्सव सबसे पहले ब्रह्माजी द्वारा मनाया गया जो आज तक मनाया जा रहा है। यह ब्रह्मोत्सव वर्ष में एक बार मनाया जाता है। किन्तु अधिक मास के साल में दो ब्रह्मोत्सव मनाये जाते हैं।

यहां का सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि यहां स्त्रियां, लड़कियां, लड़के, पुरुष सभी मन्नते पूरी होने पर अपने केश कटाते हैं। एक बहुत बड़ी इमारत की कई मंजिलों में सैकड़ों नाई लगातार केश काटते रहते हैं। यह काम नि:शुल्क होता है। मन्नत पूरी होने पर केश कटवाना एक अति प्राचीन परम्परा है। माना जाता है कि इससे भगवान प्रसन्न होते हैं और उनका आशीर्वाद हमेशा बना रहता है। केश कटवाने के बाद सिर पर चंदन का लेप लगाया जाता है।

मुख्य मंदिर, प्राचीनतम दक्षिण भारतीय शिल्प का उत्कृष्ट उदाहरण है। मंदिर का बुर्ज स्वर्णमंडित है तथा उसके ऊपर पवित्र ध्वाजास्तंभ पर ध्वज लहराता रहता है। तिरूमाला तिरूपति बालाजी मंदिर में भगवान वैंकटेश्वर (विष्णु) के पवित्र पदचिन्ह तथा लक्ष्मीपति भगवान विष्णु की मूर्ति दर्शनीय है। इस मुख्य मंदिर के अतिरिक्त तिरूमाला में अनेक मंदिर भी हैं। जिन्हें स्वामी पुष्करीनी मंदिर है जिसमें भगवान विष्णु के वैंकटेश्वर रूप में दर्शन होते हैं। 11वीं शताब्दी में निर्मित नयनाभिराम शिल्प शास्त्र के सुशोभित 'कनीपकम मंदिर है जिसमें साक्षात भगवान वैंकटेश्वर विराजमान है। यह मंदिर तिरूपति से 70 किलोमीटर तथा जिला चित्तूर से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इसी प्रकार भगवान शिवशंकर भोलेनाथ का श्रीकालाहस्थि (वायुलिंगा) मंदिर तिरूपति मंदिर से 36 किलोमीटर दूरी पर स्थित है। पौराणिक कथन के अनुसार इस शिव मंदिर में शिवलिंग के ऊपर मकड़ी द्वारा बनाया गया जाला है। जो 'श्री' के आकार का है और उस पर विराजमान हैं नागदेवता शिवलिंग को धोते हुए हस्ति अर्थात हाथी। श्री गोविंद राजा स्वामी मंदिर, श्री कपिलेश्वर स्वामी मंदिर, श्री कोदानन्दाराम स्वामी मंदिर, कल्याण वैंकटेश्वर स्वामी मंदिर, अगस्त स्वामी मंदिर तथा श्री वेडा नारायण मंदिर भी तिरूपति में अति दर्शनीय है।

बालाजी मंदिर से लगभग 5 किलोमीटर दूर तिरुच्चानूर में पद्मावती का मंदिर तथा और उसी के सामने पद्म सरोवर है। स्थानीय भाषा में इस देवी को 'अवलेलुमंगम्मा' कहते हैं। लोगों की ऐसी मान्यता है कि वैंकटेश्वर बालाजी के दर्शन के पश्चात पद्मावती देवी का दर्शन न करने से बालाजी की यात्रा पूर्ण नहीं होती है। भक्तों की ऐसी आस्था है कि सरोवर में स्नान करने से गृह बाधाएं भूत, प्रेत व ब्रह्मराक्षसी सारी बाधाएं दूर हो जाती है।

आंध्र प्रदेश के टी.टी.डी. (तिरूमल्ला तिरूपति देवस्थान) विभाग द्वारा मंदिर की देखरेख की जाती है। टी.टी.डी विभाग मंदिर में आने वाले चढ़ावे से तिरूपति नगर में 'वैंकटेश्वर विश्वविद्यालय' भी चला रहा है। दर्शनार्थियों के आवास के लिए अनेक भवनों, सभा मंडपों का निर्माण एवं प्रबंध भी करता है।

**-प्रधान संपादक-अध्यात्म अमृत**
**ज्ञानमंदिर, मदनगंज-किशनगंज-305801**

# EID THAT BRINGS PEOPLE TOGETHER

**Maulana Wahiduddin Khan**

According to the Islamic tradition, there are two festivals observed by Muslims every year - Eid al-Fitr just after Ramadan and Eid al-Azha in the month of Hajj.

Eid al-Fitr literally means 'festival of breaking the fast'. Like other festivals, Eid al-Fitr is a symbol of an important article of faith. It reminds one of an Islamic belief in the form of social practice.

Muslims believe that human life is divided into two parts: the pre-death period and the post-death period. One who follows divine commandments in the pre-death period will be rewarded in the post-death period.

Just before Eid al-Fitr, Muslims keep a fast throughout the whole month of Ramadan. Fasting symbolises life in the present world in which Muslims follow God's commandments. Eid al-Fitr denotes the reward that will be given by God Almighty in the Hereafter in return for our good deeds.

Fasting in the month of Ramadan is not simply giving up food. In fact, it symbolizes abstention from all kind of practices that are unlawful in Islam.

The Arabic word for roza is 'sawm' which means abstinence. Abstaining from food and water in the daytime during Ramadan reminds Muslims that they have to lead their lives with a sense of responsibility. They have to remind themselves that, in present world, they have to adopt a life of abstinence, taking something and leaving something. This is the true spirit of Ramadan.

Then comes the festival of Eid al-Fitr, a symbolic reminder of the fact that one who leads a responsible life in this world will be rewarded with a life of happiness in eternal Paradise.

Eid al-Fitr also has a social connotation. On this day Muslims go out of their homes, offer a congregational prayer, meet their neighbours, exchange good wishes with other people and eat and drink without any restriction. All these activities are reminders of life in Paradise.

Eid al-Fitr may be a Muslim festival, but Muslims, like other communities, live in a society, in a neighbourhood. This makes Eid al-Fitr automatically a social festival. Therefore, Muslims meet not only with their religious brothers, but also with neighbours of other denominations and with their colleagues at work or in business.

It is this social aspect of Eid al-Fitr that has led to the practice of Eid Milan. Muslims observe Eid Milan by inviting their neighbours and others to spend some time with them. In this sense Eid al-Fitr promotes social harmony.

Like other festivals, Eid al-Fitr cannot be observed in isolation. It is but natural that the festival begins as a Muslim tradition but, in practice, it turns into a social festival. When Muslims visit shopping centres during the pre-Eid al-Fitr period to purchase things for Eid, they are bound to meet their fellow brethren. Then when they leave their homes to go to mosques, they again meet other members of society. Thus, every activity of Eid al-Fitr automatically turns into a social activity. In this sense the observation turns into a human festival rather than a Muslim festival, sometimes directly and sometimes indirectly.

Eid al-Fitr has a form, but at the same time there is a spirit inherent in all the festivity. In terms of form it may seem to be a limited festival, but in terms of spirit it is a universal festival. If Eid al-Fitr is observed in its true spirit it will energise the whole community, bringing people together in harmony and gratitude.

Eid al-Fitr therefore truly means Eid al-Insaan or a festival of humankind. ●

# APPROPRIATE COUNSEL FOR PATH OF RIGHTEOUSNESS

**Radha Prathi**

If one has been observant, one must have often noticed that people have a lot of issues in voicing their opinions during a discussion.

While some of them want to butt in with their views every now and then, there are others who bide their time and then there are yet others who prefer to remain the poster on the wall.

The nature of the discussion could be formal or otherwise but the outlook of the majority is generally taken into consideration.

The arguments and solutions, if any, which follow such debates, may or may not be in the best interests of all concerned.

At such times, one is generally thrown into a quandary for want of appropriate counsel.

The finer points of the case which involve human values, ethos, time, place and circumstances are often overlooked in favour of what appeals to the masses in the light of justice.

Analysing a given situation and arriving at a suitable decision can be a challenging task.

If the matter involves intricacies of dharma which seems to defy plain logic at the outset then it can be excruciatingly difficult to arrive at a palpable conclusion.

It often takes a great mind and a kinder heart for a person to chart out a course of action that will not swerve from the path of righteousness.

An instance from the Mahabharata highlights the importance of cool and calculated thinking which explores every option before taking the extreme step.

When the Pandavas completed their

# AWAKEN 'KRISHNA' IN YOUR CONSCIOUSNESS

**Sri Sri Ravishankar**

Janmashtami celebrates the birth of Krishna. He is not a vyakti or person but shakti or energy. Krishna was poornakalaavataran, a complete incarnation. The purpose of celebration is to realise that Krishna is in me. In the Bhagwad Gita, Krishna says, "One who sees everyone in Me and sees Me in everyone, for such a person, I shall never remain hidden and he shall never be far from me."

Krishna's life has all the nine rasas or flavours. For instance, he was naughty like a child, a warrior, joy personified and a source of knowledge. He was a perfect friend and guru. His birth on ashtami signifies his mastery of both spiritual and material worlds. He is a great teacher and spiritual inspiration as well as the consummate politician. On the one hand, he is Yogeshwara, the Lord of Yogas while on the other, he is a mischievous thief. His behaviour is a perfect balance of extremes — perhaps this is why his personality is so difficult to fathom. The avdhoot is oblivious to the world outside and a materialistic person, a politician or a king is oblivious to the spiritual world. But Krishna is both Dwarkadheesh and Yogeshwar.

To understand Krishna, simply become Radha, Arjuna or Uddhava. Three kinds of people seek refuge in God -- the lover, the miserable and the wise. Uddhava was wise, Arjuna was miserable and Radha was love personified. Krishna's teachings are most relevant to our times as they neither let you get lost in material pursuits nor make you completely withdrawn. They rekindle your life, from being a burnt-out and stressed personality to a more centred and dynamic one. Krishna teaches us devotion with skill. To celebrate Gokulashtami is to imbibe extremely opposite yet compatible qualities and manifest them in your own life.

Krishna tells Arjuna, "You are very dear to me" and says he must surrender. Surrender begins with an assumption. You assume you are the most beloved of the Divine, and then surrender happens. Surrender is not an action; it is an assumption. Non-surrender is ignorance, an illusion. Surrender has to begin as an assumption and then it reveals itself as a reality. Finally, it reveals itself as an illusion. An illusion, because there are no two aspects, no duality. There is no independent existence of anyone. An individual has no independent existence.

So, in the Gita, Krishna says, "He is dear to Me who neither goes on thanking people nor hates anyone." Thanking and feeling obliged indicates that you believe in someone else's existence rather than in the Divine who is ruling everything. When you feel obliged, then you are not honouring the principles of karma or the divine plan. Appreciate people for what they are; do not thank them for what they do. Otherwise your thankfulness is centered around the ego. You are grateful, but not for an act. You are grateful for what is.

Hence the most authentic way of celebrating Janamashtami is to know that you have to play a dual role — of being a responsible human being and at the same time to realise that you are above all events, the untouched Brahmn. Imbibing a bit of avadhoot and a bit of activism in your life is the real significance of celebrating Janmashtami. Awaken the Krishna in your consciousness – "Krishna is not far from me, not separate from me, he is within me'-- this feeling will fill your life with Krishna. ●

period of exile and a year in incognito, they discussed their future plans in the court of Virata with the finest of men who were on their side.

Though declaring war against the Kauravas was articulated by the majority, Krishna brushed it aside.

Instead, he suggested trying out peace talks with the enemy camp, despite knowing the vindictive nature of the Kauravas which would trigger off the impending war.

Most of the warriors on the side of the Pandavas were deeply disappointed with Krishna's suggestion, but deep inside they knew that his decision must be justified and they carried out his plan. This episode can serve as a guide when we are faced with testing times.

We can certainly do well, to analyse a matter threadbare, weigh its pros and cons and approach it with a win-win theme before taking the extreme step.

Then, one can be guilt-free, stay clear of blame games and expect the continued support of one's team that can see us through any situation.

# वास्तु और पारिवारिक संबंध

पंडित दयानंद शास्त्री

**वास्तु के अनुसार घर में अच्छे पलों को दर्शाती ग्रुप फोटो अवश्य ही लगानी चाहिए। यह फोटो बड़ी साइज की होनी चाहिए तथा इसे घर में पूर्वी दीवार पर लगाएं। इस फोटो की सुंदर फ्रेम बनवाएं। लकड़ी की फ्रेम शुभ रहती है। इस फोटो में सभी सदस्य के चेहरे पर खुशी झलकती रहनी चाहिए।**

सामाजिक मान्यताओं एवं जीवनशैली में काफी तेजी से बदलाव होता जा रहा है। एक समय पिता को देवता के तुल्य मानकर पुत्र उनकी सेवा में अपना सब कुछ अर्पण करने के लिए तैयार रहता था। पिता भी अपने पुत्र को भक्त के समान ही प्रेम करते और सभी भाइयों के बीच समान भाव रखते थे। लेकिन आज बहुत से ऐसे लोग हैं जो पिता की सेवा में कम उनकी संपत्ति में अधिक रुचि रखते हैं। पिता की बातों की अवहेलना करते हैं। इसके अलावा अन्य कई पारिवारिक मुद्दों के कारण पिता पुत्र के बीच स्नेह की कमी हो जाती है।

वास्तु दोष व्यक्ति को गलत मार्ग की ओर अग्रसर भी करते हैं। आपके घर का वास्तु ठीक नहीं है तो आपकी संतान बेटा हो या बेटी वह अपना रास्ता भटक सकती है और गलत फैसले लेकर अपना जीवन तबाह भी कर सकती है यहां तक कि घर से भाग जाने का साहस भी कर सकती है। वास्तु दोष सबसे पहले मन और दिल को प्रभावित कर बुद्धि को भ्रष्ट कर देते हैं।

घर-परिवार के सदस्यों में हमेशा प्रेम बना रहे, सभी एक-दूसरे के साथ खुश रहे, इसके लिए हम कई प्रकार के प्रयास करते हैं। घर के लोगों में एकता बनी रहे इसके लिए वास्तुशास्त्र में सटीक उपाय बताया गया है-

परिवार के सभी सदस्यों की एक बड़ी फोटो। सभी के घरों में सभी सदस्यों की ग्रुप फोटो अवश्य ही रहती है। इस तरह की फोटो भी प्रेम और खुशी बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वास्तु के अनुसार घर में अच्छे पलों को दर्शाती ग्रुप फोटो अवश्य ही लगानी चाहिए। यह फोटो बड़ी साइज की होनी चाहिए तथा इसे घर में पूर्वी दीवार पर लगाएं। इस फोटो की सुंदर फ्रेम बनवाएं। लकड़ी की फ्रेम शुभ रहती है। इस फोटो में सभी सदस्य के चेहरे पर खुशी झलकती रहनी चाहिए।

जब भी इस फोटो को कोई भी देखेगा तो उसके मन में सभी के लिए प्रेम बढ़ेगा और उसका मन प्रसन्न होगा। वास्तु के अनुसार इस तरह की छोटी-छोटी बातें ही परिवार में एकता बनाए रखती है और घर में लड़ाई-झगड़े तथा क्लेश नहीं होते, मनमुटाव नहीं रहता। रिश्तों की मजबूती के लिए जरूरी है कि सभी में परस्पर प्रेम रहे। सभी रिश्तों के बीच प्रेम बढ़ाने में घर का वातावरण सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। घर का वातावरण ऐसा रखें जिससे परिवार के सभी सदस्यों का मन शांत रहे। वास्तु के अनुसार बताई गई बातों को अपनाने से घर में ऐसा वातावरण निर्मित हो सकता है।

आपकी बेटी या बेटा प्यार के चक्कर में आकर भटक गए है, तो उसे कुछ न कहकर सबसे पहले घर की तरफ ध्यान दें और जो वास्तु दोष मौजूद हों, उन्हें दूर करने की कोशिश करें। वास्तु में दिशा, सजावट और वजन का काफी महत्व होता है। इन तीनों का आपस में संतुलन बहुत जरूरी है। बेहतर निर्णय क्षमता के लिए अपनी बेटी और बेटे का कक्ष अपने कक्ष से पूर्व दिशा की ओर रखना चाहिए। उसके पढ़ने लिखने की दिशा भी पूर्व ही होनी चाहिए। जहां तक मुमकिन हो बेटी को अपने कक्ष में सोने दें। उसके कमरें में सुंदर, आकर्षक और मोहक पेंटिंग लगी होनी चाहिए। इससे बेटी के मन में आत्मविश्वास के भाव उत्पन्न होंगे।

उसके कमरे में गहरे या भड़कीले परदे ना लगाए और रोशनी की व्यवस्था भी पर्याप्त रखें जितनी आवश्यकता हो उतना ही प्रकाश होना चाहिए अर्थात एकदम तेज रोशनी ना हो। लाल रंग का प्रयोग न कर पीले रंग का प्रयोग करें। बड़ी पेंटिंग भी उसके कमरे में ना रखे तो अच्छा होगा।

अपनी बेटी या अपने बेटे का कमरा ज्यादा सजा हुआ नहीं होना चाहिए कोई भी विलासिता का सामान वहां नहीं रखना चाहिए। क्योंकि इससे विलासिता बढ़ती है और गलत भावना का विकास होने लगता है। टेलीफोन, टीवी संगीत से संबंधित कोई भी वस्तु का प्रयोग कम से कम करें। इस तरह की बातें भी आपकी संतान को विद्रोही बनाती है।

अपनी संतान की जरूरी सामान किताब, कलम आदि घर में जन्म वास्तु के अनुसार रखें। उसके सिरहाने बेकार के सामान रद्दी आदि ना रखे और ना ही अपने बच्चों के पलंग के नीचे जूते-चप्पल इत्यादि रखें और अपने बच्चों की अलमारी में नए जूते या चप्पल आदि ऊपर-नीचे कही भी ना रखे। इसके कारण आपकी संतान घर में बड़ों का आदर सत्कार नहीं करेगी अर्थात जिद्दीपन बढ़ेगा व अपने को ही घर का मुखिया मानने लगेगी।

**-विनायक वास्तु एस्ट्रो शोध संस्थान**
**कसेरा बाजार**
**झालरापाटन सिटी-326023**
**(राजस्थान)**

# समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें



## पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

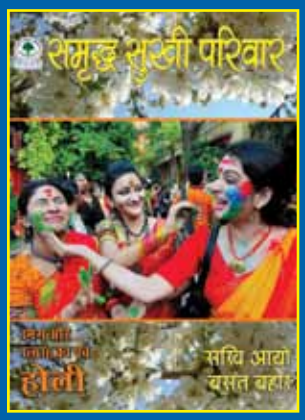

| | |
|---|---|
| कवर अंतिम पृष्ठ | 25,000 |
| कवर द्वितीय/तृतीय | 20,000 |
| भीतरी रंगीन पृष्ठ | 10,000 |

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

## विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन-जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई-मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए IFS CODE UTIB0000119 का प्रयोग करें।

**सुखी परिवार फाउंडेशन**

ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-110092

फोन: +91-11-26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

# मनके मन के

:: ललित गर्ग ::

'मनके मन के' के गीत-गजलों में जीवन के आस-पास की टीस को जिन शब्दों में व्यक्त किया गया है, वे शब्द और भाव लफ्फाजी और बड़बोलेपन से दूर, बड़े सहज रूप में, किन्तु गहरी अर्थव्यंजना के साथ, एक अनूठे किस्म की संवेदना का एहसास कराते हैं। ये सभी गीत और गजलें यथार्थ की भूमि पर विविध आयामों का प्रस्तुतीकरण है जो कानों के जरिए मन-मस्तिष्क के कोने-अंतरों में जम जाते हैं और लंबे समय तक इनकी दस्तकें सुनाई देती हैं।

गणित और विज्ञानविद् श्री सैनी का इस संकलन के माध्यम से एक नये रूप में संपूर्ण व्यक्तित्व हमारे सामने आ जाता है। सचमुच वे उतने ही सहज-सरल और पारदर्शी हैं जितनी कि उनकी सर्जना। दुनिया की जोड़-तोड़ से नावाकिफ, दुनिया को इंसानियत की बगिया बनाने के लिए जो प्रयासरत हैं और जिनकी गजले और गीत अपने जमीर और जमीन को बचाये रखते हुए हमे आश्वस्त कराती हैं कि समय की तमाम आपाधापी, उखाड़-पछाड़, आदमी और आदमियत के तेजी से होते क्षरण के बीच, जो कुछ बचा हुआ है, अपनी मूलवर्ती पहचान, को अपने वजूद को जोड़े हुए हैं। अनाहत, अक्षत, ईमानदार, नैतिक रचनाधर्मिता के भीतर से छनकर आती हुई आश्वस्ति-आज के विद्रूप एवं विनाशकारी समय में कितनी मूल्यवान, कितनी अहम और कितनी सुखद है, आसानी से समझी जा सकती है।

मनुष्य विरोधी विचार और कर्म, हर काल में, नये-नये रूप में उभरकर सामने आते रहे हैं। इसी कारण मनुष्यता को बचाये रखने की रचनात्मक कोशिश आदिकाल से होती आ रही है। श्री सैनी उसी के अनुरूप, समाज में मानवीयता बचाये रखने और सामाजिक विसंगतियों/विद्रुपताओं को उजागर करने के लिए निरन्तर प्रयासरत दिखाई देते हैं। उनके इन गजलों और गीतों में जन-जीवन की संवेदनशील आत्मा को प्रकृति की आंखों से देखने का भी प्रयास हुआ है। यही कारण है कि इनमें मिट्टी की सौंधी खुशबू के साथ पाठक इन्हें अपने दिल के करीब महसूस करता है। प्रकृति में प्यार देखना, प्रकृति को अपने भीतर महसूस करना, तभी संभव है, जब कवि स्वयं प्रकृति प्रेमी हो और उसमें रचता-बसता हो।

इन गीत और गजलों के माध्यम से कवि ने अनगिनत उलझे और अनसुलझे प्रश्नों को बड़ी ही सहजता और सरलता से हल करने का प्रयास किया है। मुझे उम्मीद है उनके इस संकलन का पाठकों के द्वारा स्वागत होगा। नवोदित गौरव बुक्स भी बधाई का पात्र है कि उसने एक मार्मिक एवं पठनीय काव्यानंद की दिव्य अनुभूति से रू-ब-रू कराने वाली पुस्तक को प्रकाशित कर पाठकों को इससे लाभान्वित होने का अवसर दिया है।

**पुस्तक : मनके मन के**
**लेखक : सुरेन्द्र कुमार सैनी**
**प्रकाशक : गौरव बुक्स, के-4/19, गली नं. 5, वेस्ट घौंडा, दिल्ली-110053**
**मूल्य : 200 रुपये, पृष्ठ : 112**

# ध्यान

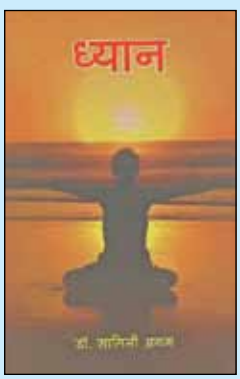


:: अरनी रॉबर्ट्स ::

ध्यान की अनेक अवस्थाएं हैं जहां मन में अनेक उथल-पुथल चलती है, विचार आते हैं, कुविचार आते हैं, मन अनेक मानसिक अवस्थाओं में विचरण करता है, फिर स्वयं ही कभी तर्क करता है कभी विचार, कभी भले-बुरे का भेद करता है तो कभी पुनः पुरानी यादों में खो जाता है तो कभी तुरंत संभलकर भविष्य के रूप के सपने संजोने लगता है। ध्यान एक ऐसी अवस्था है जहां मन हर प्रकार के विचारों से रहित हो जाता है तथा हमें एक ऐसे प्रवेश द्वार की ओर ले जाता है जहां हम वैश्विक ऊर्जा से घिर जाते हैं। ध्यान अध्यात्मशास्त्र तक पहुंचने का सिंहद्वार है और हमारे आत्मिक विकास में सहायक होता है। कोई भी व्यक्ति ध्यान कर सकता है। इसके लिए किसी धार्मिक अथवा रहस्यात्मक दर्शन को थामने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है।

ध्यान करते समय अगर आप उस स्थान की अंतर्दृष्टि से देखने की कोशिश करते हैं जहां जाने की इच्छा आप रखते हैं अथवा आप जहां जा चुके होते हैं और जिनकी खूबसूरत अहसास आपके मन में बसा हुआ है तो ध्यान आनंददायक हो जाता है। अपनी अंतर्दृष्टि से आप मंदिर, बगीचा, फूलों की क्यारियों एवं प्राकृतिक दृश्यों को देख सकते हैं। लेखिका डॉ. शालिनी अगम ने ध्यान की विविध पहलुओं को बहुत ही सरल शब्दों में व्यक्त किया है।

**पुस्तक : ध्यान**
**लेखिका : डॉ. शालिनी अगम**
**प्रकाशक : नव्या पब्लिकेशन, गोकुल पार्क सोसायटी 80 फूट रोड, सुरेन्द्र नगर-363002 (गुजरात)**
**मूल्य : 50 रुपये, पृष्ठ : 80**

# लघुकथाएं जीवन मूल्यों की

:: बरुण कुमार सिंह ::

जीवनमूल्यों की ये लघुकथाएं अपने छोटे-से कलेवर में, वह सब कुछ समेटे हुए है जो आज आहत मानवता के लिए अनिवार्य है। आज मूल्यों का क्षरण सर्वाधिक चिंता का विषय है। आजादी के बाद चरित्र और मूल्यों का क्षरण हमारे भारतीय समाज की निरंतर घटनेवाली सबसे बडी दुर्घटना बन गई है। इसमें विभिन्न विषयों से संबंधित लघुकथाएं दी गई हैं 'पहुंचा हुआ फकीर', 'लड़ाई', 'फर्क', 'सपना', 'प्यार', 'हारने का सुख', 'अमानत' 'शिष्टाचार', 'रिश्ते का नामकरण', 'एक राजा का दर्द', 'बड़े साहब', 'गुरुदक्षिणा', 'नाम-सम्मान', 'फरिश्ता', 'जगमगाहट', 'देखो इधर भी' आदि लुघुकथाएं प्रमुख हैं।

इस संग्रह की लघुकथाएं में आशा के अनेक रंगीन किरणें बिखरी पड़ी हैं। लघुकथाएं मानव के मन और मस्तिष्क के द्वंद्वों तथा उनके विरोधाभासों को जिंदगी की रोजमर्रा की घटनाओं और विचारों के माध्यम से हमारे सामने लाती हैं। 'लघुकथाएं जीवन-मूल्यों की' कुछ ऐसे पलों को पाठकों से रू-ब-रू करवाती जिन पर उसका ध्यान यदाकदा ही जाता है। इस संग्रह की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें अनेक लेखकों की लघुकथा को एक ही जगह सहेजने का प्रयास किया गया है।

**पुस्तक : जीवन मूल्यों की**
**संपादन : सुकेश साहनी/रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'**
**प्रकाशक : हिंदी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार बिजनौर-246701 (उत्तर प्रदेश)**
**मूल्य : 50 रुपये, पृष्ठ : 96**

पुखराज सेठिया

# श्रवणबेलगोल

## अहं विसर्जन की अमर गाथा

प्राचीन काल से ही भारत भूमि पर वैदिक एवं श्रमण ये दो मुख्य धाराएं प्रवाहित होती आ रही हैं। इन दोनों धाराओं का धर्म, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान और साहित्य-संस्कृति के विकास में पृथक एवं समन्वित रूप से महत्वपूर्ण योगदान रहा है। श्रमण परम्परा जैनधर्म के चौबीस तीर्थंकरों में से प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव हुए। आपकी सुनंदा व सुमंगला दो रानियां थी। इनसे आपको भरत, बाहुबली आदि 100 पुत्र एवं ब्राह्मी व सुंदरी नामक दो पुत्रियां हुई। भरत के नाम से ही इस देश का नाम भारत पड़ा।

भारत के चक्रवर्ती सम्राट बनने के विजय अभियान को चुनौती देने पर भरत और बाहुबली के मध्य भीषण युद्ध हुआ। दोनों भाइयों के मध्य दृष्टि युद्ध, जल युद्ध और मल्ल युद्ध के द्वारा हार जीत का निर्णय होना था। सभी युद्धों में भरत की पराजय हुई। एक तरफ भरत की चक्रवर्ती सम्राट बनने के लालसा, दूसरी तरफ बाहुबली का स्वाभिमान। लेकिन तत्क्षण विचारों की उठती तरंगों ने बाहुबली की चिंतनधारा को मोड़ दिया। संसार से विरक्ति की ओर बढ़ते भावों से बाहुबली ने वैराग्य पथ पर कदम बढ़ाने का मन बना लिया। बाहुबली ने राजषी वस्त्र-आभूषणों का त्याग कर दीक्षा स्वीकार की। लेकिन ऋषभदेव के पास जाने में फिर अहंकार

आड़े आ गया। सोचा वहां पर मेरे सभी छोटे भाई मुझसे पूर्व दीक्षित हैं और उनके दीक्षा पर्याय में बड़े होने के कारण मुझे उन्हें वंदन करना होगा। इसी विचार से बाहुबली के बढ़ते कदम वन की ओर मुड़ गए।

एक वर्ष का प्रतिमा योग धारण कर एक ही स्थान पर एक ही आसन से निश्चल खड़े होकर आत्मध्यान में लीन हो गए। ध्यानावस्था में दिन, महीनों, वर्ष बीत गए, उनके समीप का स्थान वन-लताओं से व्याप्त हो गया। उनके चरणों के निकट ही सर्पों ने बांबियां बना लीं। कठित तपश्चर्या के बावजूद बाहुबली के मन से अहंकार की परत हट नहीं रही थी। ऋषभदेव की प्रेरणा से दोनों साध्वी बहनें ब्राह्मी एवं सुंदरी ने बाहुबली के पास आकर बोध देते हुए कहा- ''वीरा म्हारा गज थई उतरो।'' हे मेरे भाई! साधु समता में लीन रहता है। साधु होकर अहं रूपी हाथी पर क्यों सवार हो। यह अहंकार ही आपके कैवल्य ज्ञान में बाधक हैं। बहिनों का प्रेमपूर्वक उपदेश बाहुबली के कैवल्य ज्ञान प्राप्ति का निमित्त बना। वह सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

श्रवणबेलगोल में स्थित बाहुबली की विशाल मूर्ति के निर्माण का श्रेय चामुण्डराय को जाता है। चामुण्डराय गंगवंशीय नरेश राचमल्लजी के प्रधान सेनापति एवं प्रधानमंत्री थे। वे बड़े धार्मिक और गुरुभक्त व्यक्ति थे। इसके अलावा कलाप्रेमी थे। चामुण्डराय ने अपनी माता द्वारा बाहुबली की दिव्य प्रतिमा के दर्शन की अभिलाषा के आधार पर इन्द्रगिरि के ऊपरी भाग को कुशल शिल्पी द्व ारा तराशकर 57 फुट ऊंची बाहुबली की मनोज्ञ मूर्ति का निर्माण कराया। चामुण्डराय को गोम्मट के नाम से भी पुकारते थे, उनके इस नाम के कारण ही बाहुबली की यह मूर्ति गोम्मटेश्वर के नाम से भी प्रसिद्ध है।

भगवान बाहुबली की विशाल मूर्ति के निर्माण के बाद चामुण्डराय ने इसका विधिवत अभिषेक करना चाहा तो सैकड़ों कलश ढार देने के बाद भी मूर्ति का अभिषेक नहीं हो सका, उसका नीचे का भाग सूखा ही रह गया। सब लोग स्तबध थे। इस पर आचार्य नेमिचन्द्र ने चामुण्डराय को यह सुझाव दिया कि एक बुढ़िया अभिषेक करना चाहती है, उसे अभिषेक करने दो। उस वृद्धा (अज्जी) को आदर सहित लाया गया, उसके हाथ में एक फल था, जिसके दो भागों को खोखला करके उसमें थोड़ा सा दूध भर रखा था। सभी के मुख पर आश्चर्य मिश्रित हंसी थी कि यह क्या अभिषेक कर सकेगी। किन्तु आश्चर्य उसने जो दूध की बूंदे मूर्ति पर डाली वे देखते-देखते विशाल धार में बदल गई और पूरी मूर्ति का अभिषेक हो गया तथा पवित्र दुग्ध धारा पहाड़ी पर बहते-बहते कल्याणी सरोवर में आ गिरी तथा सरोवर का पानी दुग्ध जैसा धवल हो गया। इधर जब वृद्धो को ढूंढा गया तो उसका कहीं भी पता नहीं था। आचार्य नेमिचन्द्र ने चामुण्डराय को बोधपाठ देते हुए कहा कि भगवान बाहुबली का जीवन अहं-विसर्जन की अमर गाथा है, आज उन्हीं की विशाल मूर्ति के निर्माण पर तुम्हारे मन में जो गर्व हो गया था, उसे ही खण्डित करने के लिए कूष्माण्डिनी देवी ने वृद्धा का रूप धारण किया था। गुल्लिका अज्जी के नाम से इस वृद्धा की मूर्ति आज भी बाहुबली के निकट है, उसके हाथ में दो भागों वाला पात्र उस फल का प्रतीक है।

भगवान बाहुबली की यह प्रतिमा विश्व की एकमात्र सर्वोच्च प्रतिमा है, जो बिना किसी आधार के खड़ी है। यह प्रतिमा एक ही पर्वत शिला को तराशकर कुशल शिल्पी द्वारा निर्मित है। यह भारतीय धर्म व संस्कृति की पहचान है। मीलों दूर से दिखाई देने वाली यह प्रतिमा संसार के प्राणीमात्र को अहिंसा का उपदेश देती है।

यह प्रतिमा कर्नाटक प्रांत के हसन जिले में श्रवणबेलगोल नामक तीर्थ पर स्थित है। प्रत्येक बारह वर्ष के बाद महामस्तकाभिषेक का भव्य आयोजन होता है।

**-एम-25, लाजपत नगर-2**
**नई दिल्ली-110024**

# बोलना एक कला है

गणि राजेन्द्र विजय

मित्रता का अर्थ प्रेम-प्रदर्शन और शत्रुता का अर्थ द्वेष रखना ही नहीं होता है। अपने कर्तव्य को भूलकर दूसरों में दोष देखना भी एक प्रकार की शत्रुता ही है, जो जितना है, जैसा है उसे उसी रूप में स्वीकार करें। सहज भाव से स्वीकार करें। किसी पर दोषारोपण न करें, यही तो मित्रता है। मैत्री के लिए हमें अपने आप में विनम्रता मृदुता, सरसता, सरलता और सद्विचारों को भी स्थापित करना चाहिए।

मैत्री के विकास के लिए क्षमा कर सकने की भावना का विकास होना नितान्त आवश्यक है। हम अपने मन में, अपने विचारों में भी किसी के प्रति बैर भाव या शत्रुता की भावना न रखें, किसी प्रकार के कलुषित विचार हम अपने मन में उत्पन्न न होने दें, अगर किसी कारण से ऐसे विचार उत्पन्न हो गये हैं तो उनको निर्मूल कर दें एवं उस व्यक्ति से मन ही मन क्षमा याचना कर अपने मन को निर्मूल बना लें। यही सच्ची मैत्री भावना का का दृढ़तम आधार है। यही उन्नति का आधार है।

मनुष्य सदैव यही चाहता है कि उसके साथ सद्व्यवहार किया जाए किन्तु वह यह भूल जाता है कि उसे भी सद्व्यवहार करना चाहिए। गलतियों से जो सीखने का प्रयत्न करता है वही उन्नति कर सकता है। गलतियों के मूल में, मनुष्य की दूसरों पर आरोप लगाने की भावना भी रहती है। अपनी गलतियों को स्वीकार करना हर किसी के वश की बात नहीं है। जो अपनी गलतियां स्वीकार कर लेता है एवं उन्हें न दोहराने का प्रण कर लेता है या उन गलतियों में आवश्यक सुधार कर लेता है वह सच्चे अर्थों में सच्चा मनुष्य है।

दूसरों द्वारा किये गये कार्यों का अंधानुकरण भी उचित नहीं होता है सदैव। कभी-कभी तो व्यक्ति लोभवश भी किसी के ऐसे कार्य का अनुसरण या अनुकरण कर लेता है जिसका परिणाम घातक सिद्ध हो जाता है। यह भी आवश्यक नहीं है कि जिस कार्य से किसी को कोई लाभ प्राप्त हुआ हो, उसे करने से सभी को लाभ पहुंचे। सभी की काम करने की शैली में अंतर होता है।

गलतियों का सुधारना ही उन्नति के पथ पर बढ़ना है। उन्नति किसी के ऊपर अपने आप नहीं बरसती है। व्यक्ति यदि लगातार प्रयत्न करता रहे, अपने आपको सुधारता रहे, संवारता रहे तो उन्नति होनी ही चाहिए।

हम भी जब तक अपने जीवन को नहीं संवारेंगे, उसकी घास, फूस, खर-पतवार को उखाड़कर नहीं फेकेंगे तब तक उन्नति के सपने ही देखते रहेंगे। अध्ययन के लिए समय निकालना अपने ऊपर निर्भर करता है। उन्नति के लिए अध्ययन आवश्यक है और अध्ययन के लिए आराम और मन बहलाव का समय कम करना पड़ेगा, आलस्य को त्यागना होगा तभी अध्ययन संभव है।

कोई भी व्यक्ति कोई भी काम करता हो, कहीं भी करता हो यदि उसमें आगे बढ़ने की इच्छा है तो उसे कोई भी रोक नहीं सकता, वह उन्नति अवश्य करेगा। अगर किसी व्यक्ति को, किसी दूसरे व्यक्ति के जीवन से कुछ सीखने की आदत पड़ जाए तो उसकी उन्नति अवश्य होगी। उसे तो कोई भी नहीं रोक सकता। अच्छी जानकारी प्राप्त करना, उसका प्रयोग जीवन में उन्नति के लिए करना, यही तो सफल व्यक्तियों की सफलता का राज है। लक्ष्य ऊंचा हो और मन में विश्वास हो तो मनुष्य गलतियों से घबराता नहीं है। गलतियों से तो वह सीखता है।

यह भी एक निर्विवाद सत्य है कि जिन्दगी में हमें जो भी अच्छे-बुरे, कड़वे-मीठे अनुभव होते हैं, वे केवल हमारे शब्दों के ही कारण होते हैं। शब्द ही तो हमारी पूंजी है। मिथ्या वार्तालाप अक्सर क्लेश का कारण होता है। शब्द सामर्थ्य संसार की सबसे बड़ी शक्ति है।

वार्तालाप का एक बहुत महत्वपूर्ण फल है-मौन। यह आश्चर्यजनक है किन्तु एकदम सत्य है। आम आदमी समझता है कि बोलना और खूब बोलना एक कला है, शिष्ट बोलना एक कला है, मीठा बोलना एक कला है। इससे भी बढ़कर एक कला है मौन रहना। मिथ्या बोलना कला नहीं है, अनर्गल प्रलाप करना कोई कला नहीं है, व्यर्थ की बकवास करना, आलोचना करना, गाली-गलौच करना कोई कला नहीं है। व्यक्ति को वहीं बोलना चाहिए जहां आवश्यकता हो और उतना ही बोलना चाहिए जितना आवश्यक हो अन्यथा मौन का सहारा लेना चाहिए। मौन रहने का प्रयास करना चाहिए।

हर व्यक्ति की अपनी जिम्मेदारियां होती हैं। वह उन्हें निभाने में दत्तचित्त होकर लगा ही रहता है। आज संसार इतनी तीव्र गति से चल रहा है कि प्रायः हम सभी को उसके साथ दौड़ना ही पड़ता है। एक नियमित कार्यशैली, अर्थोपार्जन की दौड़धूप, जीवन की आपाधापी, हाथ से मुंह तक की व्यवस्था, सामाजिक उत्तरदायित्व, पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूरा करने में आज का हर व्यक्ति इतना उलझा रहता है कि उससे किसी अन्य प्रकार के कार्यों की उपेक्षा करना ही गलत है।

कई बार संकोचवश व्यक्ति ऐसे किसी कार्य को संपन्न करने के लिए सहयोग देने को तत्पर हो जाता है जिसमें या तो उसकी रुचि नहीं रहती है या फिर समय का अभाव रहता है। ऐसे में यदि वह व्यक्ति सुमधुर शब्दों में परन्तु स्पष्ट तरीके से यह बता दे कि वह समय नहीं दे पायेगा या उस कार्य को संपन्न करने में सहभागी नहीं हो सकेगा तो उसकी बहुत सारी परेशानी कम हो सकती है।

मनुष्य प्रतिकूलता में दुःख और अनुकूलता में सुख का अनुभव करता है। वह जब किसी से कुछ आशा करता है और उस आशा की मात्रा से अधिक की प्राप्ति उसे होती है तो उसे प्रसन्नता होती है, लेकिन जब उसे उस आशा की मात्रा से कम की प्राप्ति होती है तो उसे दुःख होता है। इसमें छुटकारा पाने का एक सरल उपाय है, आशा ही न करें। बस आनन्द ही आनन्द होगा। जब आशा ही नहीं करेंगे तो जो भी प्राप्त होगा, वह अधिक ही होगा और नहीं प्राप्त होगा तो दुख नहीं होगा क्योंकि आशा की ही नहीं थी। ●

# SHREE AADINATH TRADING COMPANY

# BLACK DIAMOND MOVERS

## COAL CONSULTANTS, COAL CO ORDINATORS, COAL MERCHANTS ,COAL HANDLING AGENTS

## HIGHLIGHTS

- **Leading Coal Handling Agents and Coordinators since 45 years.**
- **Complete Coal Solutions under one Roof.**
- **Handling bulk Coal requirements of Power Plants, Iron and Steel Plants and Paper Mills from the various subsidiaries of Coal India Ltd.**
- **Expertise in Coal Linkage from Ministry of Coal and Coal India Ltd.**
- **Expertise in Rake Loading/Unloading and Liasioning.**

# JAIN GROUP

Branches: **Assam, Madhya Pradesh Maharashtra, Uttar Pradesh Uttarakhand, West Bengal Jharkhand**


CONTACT DETAILS
**Black Diamond Movers**
**Flat 3A, Block 11,**
**Space Town Housing Society,**
**V.I.P. Road, Raghunathpur,**
**Kolkata- 700052**
**Contact Person:**
**Amit Jain- +91 9412702749**
**Ankit Jain- +91 9830773397**
**blackdiamondmovers@gmail.com**

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2013-2015
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
August 2013

# Indian
## *Charity & Welfare Exchange*

The mission of ICWE in to achieve Global Excellence in philanthropic services and to dedicate ourselves for worldwide Donor-Donee Exchange, keeping in the view the needs and interests of the society.

**ICWE is committed to :-**

- The society by making a sustainable difference in the life of the less privileged children, women, aged, disabled and of those who are living in poverty & injustice.
- Work as an Exchange between Donor and Donee to facilitate their objective and to support them identifying the potential donor or donee and the opportunities that each side offers to the other side.
- Provide philanthropic advisory services to donors and NGOs to help them in their aims & objects and to perform their work properly so that they can achieve their ultimate goal to serve the under privileged sections of the society.
- Maintain a worldwide accessible data bank of NGOs, Donors and Donees to make this field more collaborative.

**Advisory Services :**

ICWE with its highly qualified and focused team of professionals provides specialized and valuable advisory services to NGOs, Trusts, Corporate and other philanthropic organizations on following area:

- Legal
- Financial
- Management
- Project
- Fund Raising
- Event Management

**ICWE Care for All :**

ICWE is committed to serving various social causes. It launched various program for underprivileged sections of the society. Main areas are:

- Children
- Women
- Aged People
- Disabled
- Education
- HIV

**Register with us :**

**Donor:** ICWE provides a global platform to Donors to identify a cause that is appropriate for their support.

**Done:** ICWE provides financial assistance to Individual and Institutions. It also provide a platform to searching and approaching potential donors for their cause.

Please register on website and explore the world of philanthropy.

**Indian Charity & Welfare Exchange**
A-56/A First Floor, Lajpat Nagar-II
New Delhi-110024, India
Phone: +91-11-41720778
Fax: +91-11-29847741

www.indiancharityexchange.com
info@indiancharityexchange.com

If undelivered please return to:
**Editor, Samridha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092**